thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 12 अप्रैल 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 12 अप्रैल 2015 से 18 अप्रैल 2015

बै. कु. 08 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 79, अंक 152, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. पुष्पांजलि, (दिल्ली) में आर्य समाज स्थापना दिवस पर यज्ञ

डी.ए.वी. स्कूल पुष्पांजलि के प्रांगण में आर्य समाज स्थापना दिवस पर यज्ञ का आयोजन किया गया। 12वीं कक्षा के छात्र–छात्राओं ने श्रद्धा से यज्ञ में भाग लिया। छात्र–छात्राओं ने महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का हमारे समाज में किए गये कार्यों को व्यक्त करने वाले विचार, भाषण और भजन प्रस्तुत किए। प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल जी ने छात्र–छात्राओं को आर्य समाज द्वारा समाज के उत्थान में किए गए

योगदान को व्यक्त करते हुए कहा कि आर्य समाज ने प्रत्येक स्थिति में व्यक्ति समाज और राष्ट्र को जीवन जीने का वह आदर्श मार्ग बताया है जो हमारे ऋषि मुनियों ने निर्धारित किया था। अगर हमें सुमार्ग पर चलना है तो आर्य समाज के मूल्यों को अपने जीवन में अपनाना ही होगा। आज हमारे समाज में नैतिक मूल्यों का क्षरण हुआ है शायद उसका कारण है कि हम कृतज्ञ भाव से शून्य हो गए हैं इसलिए हमें नैतिक बनना ही चाहिए और इसके लिए आवश्यक है कि हम अपने पूर्वजों, माता–पिता और अध्यापकों के प्रति कृतज्ञ रहें, आदर भाव से युक्त रहें। निश्चित ही यह नैतिक होने की प्रारम्भिक और महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है। सभी उपस्थित छात्र–छात्राओं द्वारा आर्य समाज के दसों नियमों का उच्चारण कर कार्यक्रम का समापन हुआ।

डी.ए.वी. आर. के. पुरम् ने याद किया शहीदों को

भारत के इतिहास में स्वतन्त्रता पाने के लिए अनेकों वीरों ने अपने प्राण न्यौछावर किए। उन्हीं में स्मरणीय हैं भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव इन्हीं की पुण्यतिथि के अवसर पर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सेक्टर–9 में शहीदी दिवस के अवसर पर मुख्याध्यापिका एवं समस्त शिक्षकों ने यज्ञ में भाग लेते हुए श्रद्धा सुमन अर्पित

किए। मुख्याध्यापिका जी ने जहाँ भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को जेल में रखा गया था वहाँ के जेलों के बारे में बताया और कहा आज भवन का निर्माण हो रहा है, सड़कों का निर्माण बहुत जोर शोर से चल रहा है, परन्तु मानव का निर्माण नहीं हो रहा। अतः आज जरुरत है कि हम सभी पूरी जिम्मेदारी के साथ बच्चों में देशप्रेम की भावना जागृत करें। उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाया जाए। शहीदों को स्मरण करते हुए हवन का समापन किया गया। अंत में देश भक्ति की भावना को उजागर करते हुए–मेरा रंग दे बसंती चोला.... कर चले हम फिदा जान तन साथियों जैसे देश भक्ति गीत को सुनते हुए दिन व्यतीत किया।

डी.ए.वी. स्कूल फिल्लौर में वार्षिक समारोह में बिखरी 'भारतीय संस्कृति' की छठा

डीआरवी डीएवी सेन्टेनरी पब्लिक स्कूल फिल्लौर में वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह में भारतीय संस्कृति की धूम रही। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री एच. आर.गन्धार (सलाहकार, प्रेसीडेंट डीएवी कालेज मैनेजिंग कमेटी) थे। श्री यशपाल वडेहरा विशेष अतिथि के रुप मे पधारे। श्रीमति पी. पी. शर्मा (क्षेत्रीयनिदेशक), श्री एस के मल्होत्रा(चेयरमैन) तथा श्री अश्विनी वडेहरा(वाइस चेयरमैन एलएमसी) ने भी उपस्थित रह कर समारोह की शोभा बढाई।

दीप प्रज्ज्वलन के साथ कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। आरकेस्ट्रा, सरस्वती वंदना, पश्चिमी नृत्य आदि के साथ विद्यार्थियों ने अपनी प्रतिभा का प्रर्दशन किया। समारोह का मुख्य आर्कषण नाटक *'एक यात्रा आधार की ओर'* रहा। उत्तम अभिनय दवारा विद्यार्थियों ने भारतीय एवं वैदिक संस्कृति का महत्व एवं आवश्यकता लोगो को समझाई। प्रधानाचार्य श्री योगेश गंभीर ने वार्षिक रिपोर्ट पढकर सुनाई। मुख्य अतिथि श्री एच. आर. गंधार ने अपने भाषण में डीएवी यूनिवर्सिटी की प्रगति तथा उत्तम परीक्षा परिणामों की चर्चा की। शैक्षणिक एवं सह शैक्षणिक स्तर पर उत्तम प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कार प्रदान किए गये। समारोह में विभिन्न डीएवी स्कूलों एवं कालेजों के प्रधानाचार्यो ने उपस्थित रहकर शोभा बढाई। श्री एस के मल्होत्रा ने समारोह में आने व सफल बनाने के लिए सभी का धन्यवाद किया। मुख्य अतिथि ने विद्यालय की प्रगति एवं विद्यार्थियों की प्रतिभा की प्रशंसा की। समारोह का समापन राष्ट्रीय गाने से हुआ।

जसोला विहार के नितिन श्रीवास्तव के प्रथम आने पर मिली छात्रवृत्ति

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार के दसवीं कक्षा के छात्र नितिन श्रीवास्तव को 'आर्य विद्या सभा' की ओर से धर्म शिक्षा तथा संस्कृत के लिए छात्रवृत्ति (वर्ष 2013–2014) प्रदान की गई। आर्य विद्या सभा के द्वारा डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर–14, फरीदाबाद, हरियाणा में विशिष्ट परीक्षा का आयोजन किया गया था, जिसमें नितिन श्रीवास्तव ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। पुरस्कार के रूप में उसे 1800/– की छात्रवृत्ति राशि तथा प्रशास्ति प्रमाण–पत्र दिया गया। विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. वी.के. बड़थ्वाल ने नितिन के स्वर्णिम भविष्य के लिए शुभकामनाएँ देते हुए उसके उत्कृष्ट प्रर्दशन पर बधाई दी।

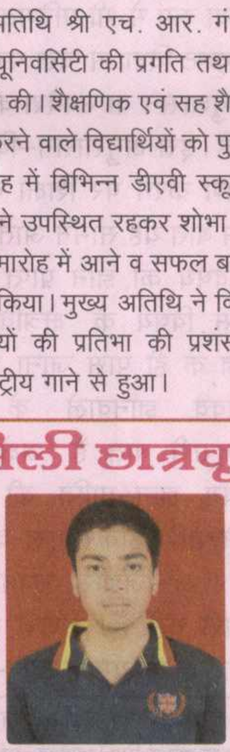

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 12 अप्रैल, 2015 से 18 अप्रैल, 2015

अनुशासन ऐसे भी

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

अक्षेत्रवित् क्षेत्रविदं ह्यप्राट्, स प्रैति क्षेत्रविदानुशिष्टः।
एतद्वै भद्रमनुशासनस्य, उत स्रुतिं विन्दत्यञ्जसीनाम्।।

ऋग् १०.३२.७

ऋषिः **कवषः ऐलूषः**। देवता **विश्वेदेवाः**। छन्दः **भुरिक् पंक्तिः, व्यूहेन त्रिष्टुप् वा।**

● **(अक्षेत्रवित्)** अक्षेत्रज्ञ, **(क्षेत्रविदं)** क्षेत्रज्ञ से, **(हि)** ही, **(अप्राट्)** पूछता है।, **(क्षेत्रविदा)** क्षेत्रज्ञ से, **(अनुशिष्टः)** उपदेश किया हुआ, **(सः)** वह, **(प्र एति)** प्रकृष्ट दिशा में चल पड़ता है।, **(एतत्)** यह, **(वै)** ही, **(अनुशासनस्य)** अनुशासन का, **(भद्रम्)** श्रेष्ठ प्रकार [है]।, [इसी मार्ग से मनुष्य], **(अञ्जसीनाम्)** अर्थव्यंजिका वेदवाणियों के, **(स्रुतिम् उत)** मार्ग को भी, **(विन्दति)** प्राप्त कर लेता है।

● क्या तुम 'अनुशासन' का श्रेष्ठ प्रकार जानना चाहते हो? जो जिस क्षेत्र का विद्वान् होता है, वह उस क्षेत्र का 'क्षेत्रवित्' कहाता है, और जिसका उस क्षेत्र में प्रवेश नहीं होता, वह उस क्षेत्र की दृष्टि से 'अक्षेत्रवित्' है। उस क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त करने के लिए अक्षेत्रवित् मनुष्य क्षेत्रवित् के पास जिज्ञासाभाव से पहुँचता है और उससे प्रश्न करता है। क्षेत्रवित् से अनुशिष्ट होकर वह ज्ञानी हो जाता है और उस ज्ञान को क्रिया रूप में भी परिणत करता हुआ प्रकृष्ट दिशा में चल पड़ता है। यही अनुशासन या उपदेश का श्रेष्ठ प्रकार है। इस अनुशासन–विधि का विश्लेषण करने पर शिक्षा के क्षेत्र में प्रथम बात यह सामने आती है कि जिस विषय का ज्ञान प्राप्त करना हो, उस विषय के 'क्षेत्रवित्' या विशेषज्ञ के ही पास जाना चाहिए, अपरिपक्व ज्ञानवाले के पास नहीं। दूसरी बात है 'अक्षेत्रवित्' का स्वयं ज्ञान–प्राप्ति की इच्छा से समित्पाणि होकर गुरू के पास पहुँचना। अ–जिज्ञासु उपदेश का अधिकारी नहीं है। तीसरी बात है प्रश्नोत्तर के माध्यम से ज्ञान–प्रदान अर्थात् जिज्ञासु का प्रश्न करना और शिक्षक द्वारा पूछे गए प्रश्नों का समाधान किया जाना, न कि शिक्षक द्वारा बलात् शिष्य पर ज्ञान का थोपा जाना। चौथी बात है गृहीत ज्ञान को आचरण में भी लाना। यही अनुशासन, शिक्षण या उपदेश या सही वैदिक मार्ग है। इस मार्ग से अनुशासन होने पर विविध विद्याओं के गम्भीर–से–गम्भीर रहस्य जिज्ञासु से सम्मुख स्पष्ट हो जाते हैं। वेदवाणी के अन्दर जो वाच्य, लक्ष्य और व्यङ्ग्य अर्थ छिपे हुए हैं और जिन जीवन–मार्गों का उपदेश वेद देते हैं, उन्हें आत्मसात् करने की भी यही विधि है।

अध्यात्म–दृष्टि से सर्वज्ञ परमात्मा क्षेत्रवित् है और अल्पज्ञ जीवात्मा अक्षेत्रवित्। परमात्मा के पास आत्मा के सब प्रश्नों का समाधान है। आश्यकता इसकी है कि आत्मा जिज्ञासु बनकर उससे पूछे। हे क्षेत्रवित् परमेश्वर! तुम गुरूओं के गुरू हो, हमारे भी गुरु बनो, तुम्हारा अनुशासन ही हमें सन्मार्ग पर चला सकता है। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

एक ही रास्ता

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में बात हो रही थी कि भक्त जब सब कुछ ईश्वर पर छोड़ देता है, जब उसे 'सविता, भर्गः, देव और वर' रूप में अपना लेता है तो उसके अंतःकरण के अन्दर एक महान् ज्योति जाग उठती है।

अपने अंतःकरण में जैसी दुनिया मैं बनाता हूँ वैसी यह मुझको मिलती है। हमारे कर्मों का फल है जो हमारे सामने आता है, कोई दूसरा इसका उत्तरदायी नहीं। कर्म के मार्ग पर ले जाने वाली है बुद्धि। इसलिए अंतःकरण में जब वह महान् ज्योति जाग उठे, वह प्रचण्ड सूर्य चमक उठे—तब प्यार से, श्रद्धा से, विश्वास से कहो, 'मुझे वह बुद्धि दे जो तेरी ओर ले जाए, तेरी ओर चले, सदा तेरी ही ओर' यह है गायत्री मंत्र। इसमें स्तुति, उपासना और प्रार्थना तीनों विद्यमान हैं।

सुनो ऐ धरती वाले लोगो! इस ममता रूप पृथ्वी पर रहने के पश्चात् हम यहाँ से लौट जाते हैं और मोक्षधाम के सुख में ठहर जाते हैं। इसका अर्थ है कि हम इस पृथ्वी के रहने वाले नहीं। थोड़ी देर के लिए यहाँ आए और फिर जाना अवश्य है। हमारा वास्तविक घर वहाँ है—उस परमधाम, मोक्षधाम, ब्रह्मलोक में। यात्री बनकर हम घर से निकले हैं, वापस घर को जाना है। यात्रा ठीक प्रकार से हो, जल्द–से–जल्द अपने घर में वापस पहुंच जाएं, यही हमें करना है।

अब आगे...

परन्तु क्यों जी, यात्री को क्या करना चाहिए? क्या यह कि बहुत–सा सामान अपने साथ बाँध लें? अपने लिए इच्छाएँ उत्पन्न कर लें कि उन्हें पूरा करने में ही समय बीत जाए? यात्रा का समय ही न मिले? नहीं मेरे भाई, इस प्रकार यात्रा नहीं होती; यात्रा पर जाना हो तो कम–से–कम सामान अपने साथ रखना चाहिए। कम–से–कम आवश्यकताएँ होनी चाहिएं। परन्तु आजकल इस बात को कौन मानता है? आज का नियम तो यह है कि अपनी आवश्यकताओं को बढ़ाओ, फिर उन्हें पूरा करने के लिए उद्यम करो। बढ़ाते जाओ आवश्यकताओं को, करते जाओ उद्यम। परन्तु मैं पूछता हूँ, पहुँचोगे कहाँ? अरे, इतने बड़े–बड़े बँगले बजाए जा रहे हो, इतना बोझ कैसे उठाओगे? इतनी बड़ी–बड़ी गठड़ियाँ बाँधे जा रहे हो, इन्हें लेकर किस प्रकार आगे बढ़ोगे? अरे ओ यात्री! तुझे जाना है दूर। इस मार्ग में कुली नहीं मिलते। सब–कुछ स्वयं ही उठाना पड़ता है। इसलिए आवश्यकताओं को कम कर, अपने बोझ को हल्का कर ताकि मार्ग सरलता से कट जाए। परन्तु आवश्यकताओं को कम करने और बोझ को हल्का करने के पश्चात् भी याद रख कि यात्रा में दुःख अधिक होता है, सुख कम। कई लोग कहते हैं, "स्वामीजी! जीवन में दुःख बहुत है।" मैं उन्हें कहता हूँ, "अरे भाई! तुम ब्रह्मलोक से निकल आए हो, अपने घर से बाहर आ गए हो, अब दुःख नहीं होगा तो क्या होगा! दुःख की चिन्ता थी तो घर से निकले क्यों थे? यात्रा तो यात्रा है। कभी भोजन अच्छा नहीं मिलता, कभी भोजन मिल जाएँ तो सोने का स्थान अच्छा नहीं मिलता, कभी दोनों मिल जाएँ तो साथी अच्छे नहीं मिलते। परन्तु घबराओ नहीं, चलते जाओ। अन्त में तुम घर में पहुँचोगे अवश्य, उस परमधाम में जहाँ अनन्त आनन्द तुम्हारे लिए भुजा पसारे खड़ा है।

परन्तु सामवेद का मन्त्र मोक्षधाम को अपना वास्तविक घर कहकर चुप नहीं हो जाता अपितु साधन भी बताता है जिनको अपनाकर इस परमधाम में पहुँचना सरल हो जाए। इस मन्त्र में कुछ शब्द आते हैं? जिन पर विचार करने से मोक्ष धाम तक पहुँचने के साधन जैसे सामने आकर खड़े हो जाते हैं। एक शब्द है 'प्रदेवादि दास'। इसका अर्थ है परमात्मा का सेवक बन अर्थात् उसका हो जा। माया के पीछे न भाग। इसकी चकाचौंध करने वाली, चमचमाती तलवार से अपनी गर्दन न कटा। दूसरा शब्द है 'अग्रने' अर्थात् आगे चल। आगे चलने से लाभ होगा। यात्रा में जितना ही आगे बढ़ेगा, दूसरों से आगे जाने का प्रयत्न करेगा, उतना ही अच्छा स्थान मिलेगा। इसलिए शारीरिक,

thearyasamaj.org

मानसिक और आत्मिक उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़। चलता चल, रुकने का नाम न ले। तीसरा शब्द 'इन्द्र' अर्थात् परमात्मा के समान शक्तिवाला, प्रभाववाला बन। मरियल टट्टू बन जाने से, हर समय यह कहते रहने से कुछ नहीं होगा, मैं कुछ नहीं हूँ, मैं कुछ भी तो नहीं कर सकता।" कर सकते हो सब–कुछ, तुम अवश्य करोगे, अपने–आप पर विश्वास रखो। अन्त में चौथा शब्द है 'देवः'। बहुत–से अर्थ हैं इसके। एक अर्थ है खेलने वाला, अर्थात् इस प्रकार चल, इस प्रकार आगे बढ़, जैसे एक खिलाड़ी आगे बढ़ता है। इस संसार को खेल का स्थल समझकर आगे बढ़ता है। इस संसार को खेल का स्थल समझकर आगे बढ़ता जा। कवि की भाँति पुकारकर कह–

बागीचए–इतफाल[1] है दुनिया मेरे आगे।
होता है शबे[2]–रोज[3] तमाशा मेरे आगे।।

अरे बच्चों के इस खेल में, संसार के इस तमाशे में रोता–चिल्लाता क्यो हैं? चोट लग गई तो सहन कर, खिलाड़ी बन, हँसता और मुस्कराता हुआ आगे बढ़।

एक दिन कहीं से 'मिलाप' का एक अंक मुझे मिल गया। उसमें रणवीर के लिखे ये शब्द मुझे बहुत अच्छे लगे–

"संसार एक सुन्दर गीत है, प्रत्येक वस्तु यहाँ पर गाती है। आकाश की आँख में तारे गाते हैं। उद्यानों की झीलों में फूल गाते हैं। समुद्र के सीने पर तरंगें गाती हैं। जीवन के किनारे पर मृत्यु गाती है। मृत्यु के उस पार नवजीवन है। हर वस्तु गा रही है, फिर मनुष्य ही पत्थर बनकर क्यों बैठा रहे? क्यों न वह प्रसन्नता से झूम उठे? क्यों न उसके ठहाकों से पृथिवी एवं आकाश गूँज उठें?"

यह है जीवन और उसके आदर्श के सम्बन्ध में उचित दृष्टिकोण! हँसते हुए आगे बढ़ो! मुस्कराते हुए आगे बढ़ो! बढ़ते जाओ, रुको नहीं! अन्त में वह परमात्मा अवश्य मिलेगा।

इन थोड़े–से दिनों में ये सब बातें मैंने आपको बताईं तो इसलिए कि इस दुःखी संसार में कदाचित् कोई उन्हें सुन ले। कदाचित् किसी के हृदय में प्रकाश जाग उठे। इस संसार में रास्ता एक ही है–

असतो मा सद् गमय! तमसो मा ज्योतिर्गमय!
मृत्योर्मा अमृतं गमय।

हम कहते हैं जो सत्य है वही ज्योति है, जो ज्योति है वही अमृत है। असत्य ही अन्धकार है, अन्धकार ही मृत्यु। हम मृत्यु से अमृत की ओर जाना चाहते हैं तो यह कार्य बुद्धि के बिना नहीं होगा। बुद्धि चार प्रकार की है– बुद्धि, मेधा, प्रजा, ऋतम्भरा। इन चारों को प्राप्त करने का उपाय गायत्री मन्त्र है। पिछले युगों में सभी महापुरुष इसका जाप करते रहे। किस प्रकार यह जाप किया जाता है, यह मैंने आपको बताया। किस प्रकार उपासना की जाती है, इसके सम्बन्ध में मैंने आपको संकेत रूप से समझाया। सीधी–सी बात यह है कि जब तक आहार शुद्ध न हो, विचार शुद्ध न हो, आचार शुद्ध न हो और व्यवहार शुद्ध न हो, तब तक प्रार्थना होती नहीं। मैं यदि दुःखी का दुःख दूर करने का प्रयत्न नहीं करता, धन पास होने पर भी निर्धन को नहीं देता, शक्ति होने पर भी निर्बल की रक्षा नहीं करता तो आचार से गिरता हूँ। मेरा देश यदि गिरा हुआ है और मैं उसे उठाने का प्रयत्न नहीं करता, यदि मैं लोगों को मिलाने के स्थान पर उन्हें लड़ाने का यत्न करता हूँ तो आचार से गिरता हूँ। आहार की शुद्धि भी बहुत आवश्यक है। जो लोग मांस खाते हैं, अण्डे खाते हैं, लाल मिर्च खाते हैं, बहुत अधिक मसालों का प्रयोग करते हैं, वे गायत्री का जाप नहीं कर सकते है; करेंगे तो उसका फल पता नहीं क्या होगा। इन वस्तुओं– आहार, विचार, आचार और व्यवहार– को शुद्ध करने के पश्चात् प्रतिदिन प्रातःकाल उठना चाहिए। प्रातः तीन से छः बजे तक का समय दिन और रात्रि का सबसे उत्तम समय है। उस समय गंगोत्री, हिमालय और दूसरे स्थानों पर बैठे हुए महात्मा भक्ति और आत्मिक शक्ति की लहरें दुनिया में छोड़ते हैं। चारों ओर ये लहरें फैलतीं हैं। जो लोग भक्ति करना चाहते हैं, वे लोग इस सहायता को क्यों न लें। उस समय नहा–धोकर, आसन पर बैठकर थोड़ी देर के लिए समझना चाहिए कि संसार में परिवार से, किसी से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। केवल मैं हूँ और वह महाशक्ति। पाँच बार ऊँचे स्वर में गायत्री का जाप करके तब ओष्ठों को बन्द कर लेना चाहिए। गले में जाप करना चाहिए, फिर मन में जाप करना चाहिए। इसके पश्चात् दोनों भौहों के मध्य में या हृदय में प्रकाश देखने का प्रयत्न करना चाहिए, जिससे अधिक सुन्दर और कुछ नहीं। उस ज्योति को देख लेने के पश्चात् मन डाँवाडोल नहीं होता। ऐसा आनन्द जाग उठता है, जिसका कोई शक्ति वर्णन नहीं कर सकती।

"संसार एक सुन्दर गीत है, प्रत्येक वस्तु यहाँ पर गाती है। आकाश की आँख में तारे गाते हैं। उद्यानों की झीलों में फूल गाते हैं। समुद्र के सीने पर तरंगें गाती हैं। जीवन के किनारे पर मृत्यु गाती है। मृत्यु के उस पार नवजीवन है। हर वस्तु गा रही है, फिर मनुष्य ही पत्थर बनकर क्यों बैठा रहे? क्यों न वह प्रसन्नता से झूम उठे? क्यों न उसके ठहाकों से पृथिवी एवं आकाश गूँज उठें?"

यह सब–कुछ मैंने आपको संक्षेप में बताया। परन्तु अब समय समाप्त हो गया। सात दिन का यह सत्संग भी समाप्त हुआ और जैसा कि मैंने कल आपसे कहा था, कथा के पश्चात् मुझे आपसे कुछ माँगना है। मैं हूँ संन्यासी, माँगना मेरा काम है। जब संन्यासी बना और यमुना में स्नान करके कह दिया कि सब–कुछ छोड़ दिया मैंने, तो मेरे पूज्य गुरु स्वामी आत्मानन्द जी ने कहा, "अब झोली फैला और भिक्षा माँग!" आश्चर्य के साथ मैंने सोचा, "क्या यह भिक्षा भी माँगनी होगी?' मरे पास मोटरें थीं, परिवार था, कारोबार था, लाखों रुपए थे, सबको मैं देता था, सबको छोड़ दिया। क्या अब भिक्षा भी माँगनी होगी?' गुरुजी ने कहा, "हाँ भिक्षा माँगनी होगी। जो तेरा कुछ था वह तेरा नहीं रहा, तू ही सबका हो गया है। तेरे मन का अभिमान न रहे, इसलिए आगे बढ़कर भिक्षा माँग!" मैंने सिर झुकाकर कहा, "जो आज्ञा गुरुदेव! मेरा अभिमान नष्ट हो, मैं भिक्षा माँगूगा। परन्तु माँगू किससे?" गुरुजी बोले, "सबसे पूर्व उस देवी से माँग, जो यहाँ बैठी है आँखों से आँसू भरे हुए।" मेरा हृदय काँप उठा। झोली फैलाकर मैं आगे बढ़ा। उस देवी के पास जाकर बोला, "देवि! आज तक तुम्हारे अतिरिक्त दुनिया की सभी स्त्रियों को मैंने माता समझा। आज तुम भी मेरे लिए माता हुई। कृपा करो, बच्चे की झोली में भिक्षा डाल दो!" तब से मैं भिक्षा माँगने लगा। संन्यास लेकर ऋषिकेश गया तो वहाँ कम–से–कम तीन दिन भिक्षा माँगकर खाने की आज्ञा थी। भिक्षा माँगना मेरा काम है, इसलिए आपसे भिक्षा अवश्य माँगूंगा। आप इतने बड़े व्यक्ति हैं, भिक्षा देंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। मैंने आपकी सेवा की है, इसके बदले में ही भिक्षा दे देना; कृपणता मत करना, देना अवश्य। देखो मैं अपनी झोली फैलाता हूँ। संन्यासी की इस झोली में अपना धन और दौलत मत डालो। मुझे इसकी आवश्यकता नहीं। अपना रुपया–पैसा मत डालो, मैं वह नहीं माँगता। फिर क्या माँगता हूँ मैं? ओ मेरी दुःखी माताओ! दुःखी भाइयो! दुःखी बच्चो! मैं तुमसे वह वस्तु माँगता हूँ जो तुम्हें बहुत कष्ट दे रही है। अपनी चिन्ताओं को मुझे दे दो! डाल दो इस झोली में। कृपणता मत करो! शाबास, डालते जाओ! डालते जाओ सब लोग! जिस–जिसको जो चिन्ता है, जो दुःख है, जो कष्ट है, जो क्लेश है, वह सब मुझे दे दो प्यारे! मैं संन्यासी बनकर भिक्षा माँगने आया हूँ।

देव! मुझे ही सब दुःख दे दो,
जग–जग सारे सुख पायें।
औरों के जो क्लेश–भोग हों, इस जन
के ऊपर आयें।।

ओ३म् तत् सत्!

इसके साथ ही 'एक ही रास्ता' कथा समाप्त हुई

डॉ. श्वेतकेतु भारत सरकार हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य मनोनीत

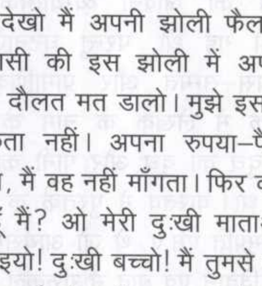

वरिष्ठ आयुः चिकित्सक, संस्कृत निष्ठ विद्वान् एवं विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, क्षैणिक संस्थाओं से जुड़े आर्य समाज बिहारीपुर के मंत्री डा. श्वेतकेतु शर्मा को भारत सरकार के गृह मंत्रालय द्वारा केन्द्रीय सलाहकार समिति का सदस्य मनोनीत किया गया है।

डा. शर्मा विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक संस्थाओं के आजीवन सदस्य एवं महत्वपूर्ण पदों पर कार्य कर रहे हैं। आपने अनेक कार्य कलापों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की सामाजिक सेवा की है। आर्य समाज अनाथालय के अनाथ असहाय बच्चों की सेवा के साथ, समाज की विभिन्न विकृतियों, अंधविश्वास व शैक्षिक विसंगतियों को दूर करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। लगभग 26 वर्षों से समाज की विभिन्न रूपों में सामाजिक सेवा में संलग्न है।

डा. शर्मा 24 राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में अपने शोध पत्र पढ़ चुके, कई शोध पत्र वाचन पर आपको सम्मानित भी किया जा चुका है। आयुर्वेद चिकित्सा से सम्बन्धित चिकित्सा वार्ताकार के रूप में **केयर वर्ड** नामक अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य चैनल में आपकी वार्ता प्रतिदिन प्रसारित की जाती है।

thearyasamaj.org

हुतात्मा महाशय राजपाल की बलिदान–गाथा

● विश्वनाथ

सन् 1923 में मुसलमानों की ओर से एक पुस्तक 'उन्नीसवीं सदी का महर्षि' प्रकाशित हुई। यह पुस्तक महर्षि दयानन्द का बहुत घिनौना तथा अपमानजनक चित्रण था।

उन्हीं दिनों मुसलमानों ने श्रीकृष्ण महाराज के सम्बन्ध में भी एक आपत्तिजनक पुस्तक प्रकाशित की। पुस्तक का नाम था : 'कृष्ण, तेरी गीता जलानी पड़ेगी।' पुस्तक के नाम से ही समझ सकते हैं कि इसमें क्या था।

महाशय राजपाल, महर्षि दयानन्द और योगेश्वर कृष्ण का अपमान नहीं सह सकते थे। उन्होंने पुस्तक का उत्तर पुस्तक से देना उचित जाना। इन घिनौनी पुस्तकों का उत्तर देने के लिए 1924 में 'रंगीला रसूल' प्रकाशित की।

यह पुस्तक उर्दू में थी जिसमें मुसलमानों के पैगम्बर हज़रत मुहम्मद साहब की जीवनी व्यंग्यात्मक शैली में दी गई थी, परन्तु घटनाएँ सभी इतिहास–सम्मत और प्रामाणिक थीं। पुस्तक में लेखक के नाम के स्थान पर 'दूध का दूध और पानी का पानी' छपा था। वास्तव में पुस्तक के लेखक पं. चमूपति एम.ए. थे जो आर्यसमाज के श्रेष्ठ विद्वान् एवं बाद में गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य बने थे। वे महाशय राजपाल जी के अभिन्न मित्र थे, उनकी अनेक पुस्तकें राजपाल जी प्रकाशित कर चुके थे। मुसलमानों की ओर से सम्भावित प्रतिक्रिया के कारण चमूपति जी इस पुस्तक पर अपना नाम नहीं देना चाहते थे। उन्होंने महाशय राजपाल जी से यह वचन ले लिया कि चाहे कितनी भी विकट परिस्थिति क्यों न बने वे किसी को भी इस पुस्तक के लेखक के रूप में उनका नाम नहीं बताएँगे। महाशय राजपाल जी ने अपने इस वचन की रक्षा अपने प्राणों की बलि देकर की। चमूपति जी पर ज़रा भी आँच नहीं आने दी।

सन् 1924 में यह मुकदमा शुरु हुआ था और सन् 1929 में राजपाल जी का बलिदान हुआ। इन पाँच वर्षों में उन्हें अनेक बार यह कहा गया कि आप असली लेखक का नाम बता दें तो हमें आपसे कोई शिकायत नहीं रहेगी। यह बात उस ज़माने के प्रमुख मुस्लिम दैनिक–पत्रा 'ज़मींदार' में भी प्रकाशित हुई परन्तु महाशय राजपाल जी ने एक ही बात दोहराई कि इस पुस्तक के लेखन तथा प्रकाशन की पूरी जिम्मेदारी मेरी ही है, अन्य किसी की नहीं। उन्होंने जो वचन दिया उसे अन्त तक निभाया।

पुस्तक बिकती रही परन्तु इसके विरुद्ध कोई शोर न मचा। फिर महात्मा गांधी ने अपनी मुस्लिम–परस्त नीति में इस पुस्तक के विरुद्ध एक लम्बी टिप्पणी लिख दी। बस फिर क्या था, एक ओर कट्टरवादी मुसलमानों और मुल्लों ने राजपाल जी के विरुद्ध आंदोलन छेड़ दिया, दूसरी ओर सरकार ने उनके विरुद्ध सन् 1923 में 153–(अ) धारा के अधीन अभियोग चला दिया। अभियोग चार वर्ष तक चलता रहा। राजपाल जी को छोटे न्यायालय ने डेढ़ वर्ष का कारावास तथा एक सहस्र रुपये जुर्माने का दण्ड सुनाया गया। इस आदेश के विरुद्ध सैशन में अपील करने पर कारावास के दण्ड में एक वर्ष की कटौती कर दी गई। इसके पश्चात् अभियोग हाईकोर्ट में गया। हाईकोर्ट के माननीय न्यायाधीश कँवर दिलीप सिंह ने महाशय राजपाल को ससम्मान दोषमुक्त कर दिया।

मुसलमान इस निर्णय से भड़क उठे और उन्होंने राजपाल जी के विरुद्ध जानलेवा आन्दोलन छेड़ दिया, जिसके फलस्वरूप 26 सितम्बर 1927 को उन पर खुदाबख्श नामक एक मुसलमान ने उनकी दुकान पर जो हस्पताल रोड पर स्थित थी, प्राणघातक आक्रमण किया। आक्रमणकारी एक पहलवान था। उसके हाथ से महाशय राजपाल के जीवन की सुरक्षा की कोई आशा न थी। परन्तु, मारने वाले से बचाने वाला महाबली होता है, यह लोकोक्ति इस प्रसंग में सत्य सिद्ध हुई और स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज और स्वामी वेदानन्द जी जो दैवयोग से वहाँ उपस्थित थे, उन्होंने घातक को ऐसा कसकर दबोचा कि वह अपने क्रूरतापूर्ण निश्चय में सफल न हो सका। तथापि महाशय राजपाल बहुत बुरी तरह घायल हुए। घातक के विरुद्ध अभियोग चला और उसे सात वर्ष के कारावास का दण्ड मिला।

स्वामी सत्यानन्द जी पर आक्रमण

महाशय राजपाल अपने घावों के कारण हस्पताल में ही थे कि उसी दुकान पर जिसमें महाशय राजपाल जी को घायल किया गया था, स्वामी सत्यानन्द जी बैठे थे। रविवार, 8 अक्टूबर 1927 को अब्दुल अजीज़ नामक एक मुसलमान ने उन्हें महाशय राजपाल समझ कर, पीछे से, एक हाथ से चाकू व दूसरे हाथ में उस्तरे से प्राणघातक प्रहार कर दिया। घातक स्वामीजी को घायल करके भागना ही चाहता था कि अद्भुत शौर्य का प्रदर्शन करते हुए पड़ोसी दुकाने वाले महाशय नानकचन्द जी कपूर ने हत्यारे को पकड़ने का यत्न किया। इस प्रयास में वे भी घायल हो गए। उनकी पकड़ से घातक निकलना ही चाहता था कि महाशय नानकचन्द जी के छोटे भाई लाला चूनीलाल जी उस पर लपके और उसे पकड़ने का यत्न किया। उन्हें भी घायल करता हुआ हत्यारा भाग निकला परन्तु चौक अनारकली में उसे दबोच लिया गया। उसे चौदह वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड और तदनन्तर तीन वर्ष के लिए शान्ति की गारण्टी का दण्ड सुनाया गया।

स्वामी सत्यानन्द जी का पहले मेयो हस्पताल में और फिर निजी इलाज हुआ। कहीं डेढ़ मास के पश्चात् उनके घाव ठीक हुए।

अंतिम प्रहार

महाशय जी गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सव पर गए हुए थे। वहाँ वे पाँच अप्रैल को लाहौर लौटे। 6 अप्रैल 1929, शनिवार के दिन दोपहर के समय वे अपनी दुकान में आराम कर रहे थे। उनका एक कर्मचारी पुस्तकों को व्यवस्था से रख रहा था। इल्मदीन नामक एक मुसलमान युवक छुरा छिपाए हुए दुकान के भीतर आया। क्रूर हत्यारे ने आते ही लेटे हुए महाशय राजपाल जी के सीने में दोधारी छुरा घोंप दिया। वीर राजपाल जी का तत्काल प्राणान्त हो गया।

हत्यारा अपनी जान बचाने के लिए बाहर भागा। महाशय जी का कर्मचारी भी शोर मचाता हुआ उसके पीछे दौड़ा। क्रूर हत्यारा भागकर महाशय सीताराम जी के लकड़ी के टाल में जा घुसा। सीताराम जी के नवयुवक साहसी सपूत महाशय विद्यारत्न जी ने हत्यारे को कसकर अपनी भुजाओं में पकड़ लिया। इतिहास ने अपने आपको आज पुनः दोहराया। दिल्ली में अब्दुल रशीद ने वयोवृद्ध रुग्ण संन्यासी महात्मा श्रद्धानन्द पर तीन गोलियाँ चलाकर भागने का प्रयत्न किया तो वीर धर्मपाल विद्यालंकार ने वहीं उसको धर दबोचा था जब तक पुलिस ने आकर उसको बन्दी न बना लिया।

आज आर्यवीर विद्यारत्न हत्यारे इल्मदीन को कसकर पकड़े हुए थे। वह छटपटा रहा था। उसने पूरा ज़ोर लगाया परन्तु आर्यवीर की पकड़ से निकल न सका। इतने ही में और लोग वहाँ आ गए। पुलिस हत्यारे को पकड़कर ले गई।

देखते ही देखते महाशय जी की दुकान पर हज़ारों लोग एकत्रा हो गए। देवतास्वरूप भाई परमानन्द सरीखे नेता भी तत्काल वहाँ पहुँच गए। महाशय जी

का शरीर ठण्डा हो चुका था। उनकी धर्मपत्नी अपने पूज्य पतिदेव के चरणों में अपना सिर रखकर शोकाकुल थीं। छुरा शरीर से निकाला जा चुका था। शरीर को दुकान से बाहर लाकर एक चारपाई पर रखा गया और पुलिस की लारी में हस्पताल ले जाया गया। वहाँ पोस्टमार्टम किया गया।

देवतास्वरूप भाई परमानन्द जी ने महाशय जी के बलिदान पर अपने सम्पादकीय में ठीक ही लिखा था, ''आर्यसमाज के इतिहास में यह अपने ढंग का तीसरा बलिदान है। पहले धर्मवीर लेखराम का बलिदान इसलिए हुआ कि वे वैदिक धर्म पर किए जाने वाले प्रत्येक आक्षेप का उत्तर देते थे। उन्होंने कभी भी किसी मत या पन्थ के खण्डन में पहल नहीं की। सदैव उत्तर–प्रत्युत्तर देते रहे। दूसरा बड़ा बलिदान स्वामी श्रद्धानन्द जी का था। उनके बलिदान का कारण यह था कि उन्होंने भुलावे में आकर मुसलमान हो गए भाई बहनों को, परिवारों को पुनः हिन्दू धर्म में सम्मिलित करने का आंदोलन चलाया और इस ढंग से स्वागत किया कि आर्य जाति में शुद्धि के लिए एक नया उत्साह पैदा हो गया। विधर्मी इसे सह न सके। तीसरा बड़ा बलिदान महाशय राजपाल जी का है जिनका बलिदान इसलिए अद्वितीय है कि उनका जीवन लेने के लिए लगातार तीन आक्रमण किए गए। पहला वार 26 सितम्बर 1927 को एक व्यक्ति खुदाबख्श ने किया। दूसरा आक्रमण 8 अक्टूबर को उनकी दुकान पर बैठे हुए स्वामी सत्यानन्द जी पर एक व्यक्ति अब्दुल अजीज़ ने किया (जो उन्हें राजपाल समझ बैठा था)। ये दोनों अपराधी अब कारागार में दण्ड भोग रहे हैं। इसके पश्चात् अब डेढ़ वर्ष बीत चुका है कि एक युवक इल्मदीन, जो न

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– 'सूक्ष्म–इच्छाओं' से आपका क्या तात्पर्य है?

समाधान– हम जो विचार उठाते हैं, वे या तो 'सूक्ष्म–इच्छाओं' से उठाते हैं या 'स्थूल–इच्छाओं' से उठाते हैं।

● अब प्रश्न उठता है, कि सूक्ष्म–इच्छाओं से क्या तात्पर्य है? **सूक्ष्म इच्छाओं से तात्पर्य है कि–आपने मन में कोई इच्छा रखी हुई है, लेकिन वो आज आपको समझ में नहीं आ रही है, दस साल के बाद में समझ में आएगी।** जिस इच्छा से आपने मुम्बई चौपाटी की स्मृति उठाई थी, या जिस इच्छा से आपने दिल्ली का चिड़ियाघर याद किया था, वो है– 'सूक्ष्म इच्छा'। जो आज समझ में नहीं आ रही। लेकिन जब व्यक्ति लंबा अभ्यास करेगा, तो उसको धीरे–धीरे पकड़ में आएगा कि हाँ, ये छोटी–छोटी सूक्ष्म इच्छाएँ भी मैं ही उठाता हूँ। वो बहुत हल्की इच्छाएँ होती हैं, जो पहले–पहले समझ में नहीं आती, बाद में समझ आती हैं। एक मोटा उदाहरण देता हूँ –

आपने बचपन में जब पहली–पहली बार साईकिल चलाना सीखा, तो सिखाने वाले व्यक्ति ने आपको साईकिल पर बैठा दिया, हाथ में हैंडल पकड़ा दिया और कहा कि– देखो, नजर सामने रखना, पाँव की तरफ नहीं देखना, पैडल मारते जाना और हैंडल सीधा रखना, टेढ़ा नहीं करना, नहीं तो साइकिल गिर जाएगी। ऐसे–ऐसे उसने आपको संकेत बताए, दिशा–निर्देश दिए और आपको साईकिल पर बैठाकर धक्का मार दिया और कहा–चलाओ। उसने धक्का मारा तो आपने भी दो–चार पैडल मारे। चूँकि पहला दिन था, अभ्यास तो था नहीं। इसलिए आपने वही गलती की, जो उसने मना की थी। उसने कहा था कि– सड़क पर देखना और आपने पैडल की तरफ देखा। उसने कहा था, कि हैंडल सीधा रखना और आपने हैंडल टेढ़ा कर दिया। फिर क्या हुआ? गिर गए। जब गिर गए तो सिखाने वाले ने पूछा–तुमने साईकिल क्यों गिराई? पहले दिन व्यक्ति यही कहता है कि–साहब! मैंने साईकिल बिल्कुल नहीं गिराई, यह अपने आप गिरी है। छह महीना अभ्यास करने के बाद वो नहीं कहता है कि यह साईकिल अपने आप गिरती है। उसको छह महीने बाद समझ में आता है, कि पहले दिन भी जो साईकिल गिरी थी, तो मैंने ही गिराई थी। यह अपने आप नहीं गिरती। अब छह महीने में अभ्यास हो गया। अब क्यों नहीं गिरती? क्योंकि अब मेरी प्रैक्टिस हो गई है, अब मैंने सँभालना सीख लिया है। पहले नहीं सँभाल सकता था, योग्यता नहीं थी, शक्ति नहीं थी, सामर्थ्य नहीं था, ज्ञान–विज्ञान नहीं था। जैसे साईकिल चलाने वाले को पहले दिन नहीं समझ में आता, छह महीने बाद समझ में आता है। ठीक इसी तरह से आज आपकी योग्यता कम है। आज आप मन में जो विचार उठाते हैं, वो जिन सूक्ष्म इच्छाओं से उठाते हैं, वो सूक्ष्म इच्छाएँ आप आज नहीं पकड़ सकते। आज इन्हें पकड़ने की योग्यता नहीं है। दस साल, पन्द्रह साल मेहनत करेंगे और पकड़ने की कोशिश करेंगे, कि मन में कौन–सा विचार उठ रहा है। तब जाकर उसको अच्छी तरह पकड़ेंगे। इस तरह धीरे–धीरे समझ में आएगा, कुल मिलाकर यह लंबे समय में समझ में आएगा कि जो भी विचार उठ रहा है, मैं ही उठा रहा हूँ।

● **जो इच्छाएँ आज आप नहीं पकड़ पा रहे हैं, वो हैं– 'सूक्ष्म इच्छाएँ'। और जो इच्छाएँ आप आज ही पकड़ पा रहे हैं, कि हाँ, यह विचार मैंने उठाया, वो है– 'स्थूल इच्छा'।** उस स्थूल इच्छा के कारण आपने उस विचार को उठाया। मान लीजिए, आप प्रतिदिन शाम को 6 बजे ध्यान में बैठते हैं। एक दिन दोपहर 3 बजे एक विशेष व्यक्ति ने आपको फोन से कहा– ''मैं आज रात को 8 बजे आपसे मिलने आऊँगा। उस दिन शाम को 6 बजे आप ध्यान में उस व्यक्ति के स्वागत की तैयारियाँ करेंगे, कि उसे बिठाना है, क्या खिलाना है, क्या बातें करनी हैं। उस दिन रात को आठ बजे जो व्यक्ति मिलने आएगा, उसके लिए शाम को छह बजे ध्यान में आपने जो स्वागत की तैयारियाँ की हैं, वह आपकी स्थूल इच्छा थी, उसके कारण आपने सब तैयारी की। तो इस तरह से इच्छाएँ, 'सूक्ष्म–इच्छाएँ' और 'स्थूल–इच्छाएँ' दोनों तरह की होती हैं।

इन गुणों का प्रभाव हमेशा एक सा नहीं रहता, बल्कि बदलता रहता है। इन गुणों के प्रभाव के बदलते रहने से ये अवस्थाएँ बदलती रहती हैं। कभी क्षिप्त अवस्था आती है, कभी मूढ़ अवस्था आती है। जिसको आप अनकांशियस माइंड कहते हैं, वास्तव में वो चित्त की मूढ़ अवस्था है। मन कोई दो तीन नहीं हैं।

110. शंका– क्या सूक्ष्म–इच्छाएँ 'सब–कांशियस–माइंड' में उत्पन्न होती हैं?

समाधान– यह 'सब–कांशियस' माइंड क्या है? आजकल के साइकोलॉजी वाले कितने सारे माइंड पढ़ाते हैं। दरअसल, इनको ठीक से पता नहीं है। ये लोग नहीं जानते, कि माइंड इज वन, ऑनली वन। **हमारे शरीर में, एक आत्मा के साथ केवल एक ही मन है।** मन दो–तीन–चार नहीं हैं, लेकिन ये दो–तीन–चार पढ़ाते हैं। एक सब–कांशियस माइंड है, एक कांशियस माइंड है, एक अनकांशियस माइंड है। जबकि मन एक ही है।

● **हालांकि मन की अवस्थाएँ (स्टेट्स ऑफ माइन्ड) पाँच है।** इनके नाम 'योग–दर्शन' के व्यास–भाष्य में लिखे हैं। मन की पहली अवस्था का नाम है– क्षिप्त। दूसरी का नाम है– मूढ़। तीसरी का नाम है–विक्षिप्त। चौथी का नाम है– एकाग्र। पाँचवी का नाम है– निरूद्ध।

● प्रकृति में तीन प्रकार के तत्त्व (द्रव्य) हैं, जिनको गुण कहते हैं। उनके नाम हैं–सत्त्व गुण, रजोगुण, तमोगुण। **इस प्रकृति के इन सबसे छोटे–छोटे कणों (सत्त्व, रज और तम) का अपना–अपना अलग–अलग स्वभाव है।**

● **सत्त्व गुण का स्वभाव यह है, कि वो शांति देता है, सुख देता है, जिससे मन में स्थिरता होती है।** जब मन में सत्त्वगुण प्रबल होता है, सत्त्वगुण का प्रभाव अधिक होता है, तो हमको शांति महसूस होती है, अच्छा लगता है, सुख लगता है। मन में सेवा और परोपकार के, दान के, दया के अच्छे–अच्छे भाव आते हैं।

● **जब रजोगुण बलवान हो जाता है और अपना प्रभाव शुरू करता है, तो चंचलता और अशांति आती है।** इससे मन में काम्पटीशन की भावना आती है, स्वार्थ की भावना आती है, छीना–झपटी की भावना आती है, हेरा–फेरी, निंदा–चुगली और गड़बड़ करने की इच्छा होती है।

● **जब तमोगुण प्रबल होता है, तब बहुत बुरे काम करने की इच्छा होती है।** मसलन, चोरी करना, डकैती करना, स्मगलिंग करना, ब्लैक मार्केटिंग करना, हत्याएँ करना, आतंकवाद फैलाना इत्यादि।

इन गुणों का प्रभाव हमेशा एक सा नहीं रहता, बल्कि बदलता रहता है। इन गुणों के प्रभाव के बदलते रहने से ये अवस्थाएँ बदलती रहती हैं। कभी क्षिप्त

अवस्था आती है, कभी मूढ़ अवस्था आती है। जिसको आप अनकांशियस माइंड कहते हैं, वास्तव में वो चित्त की मूढ़ अवस्था है। मन कोई दो तीन नहीं हैं।

111. शंका–रजोगुण से चंचलता होती है, तमोगुण से मूढ़ता होती है, तो विक्षिप्त अवस्था किस गुण से होती है?

समाधान–

● विक्षिप्त अवस्था में थोड़ा सत्त्व गुण होता है, जिसके कारण कुछ स्थिरता होती है।

● आप सोचेंगे स्थिरता तो तमोगुण से होती है, और हमने कहा कि–विक्षिप्त अवस्था में स्थिरता सत्त्वगुण से होती है। दरअसल, तमोगुण की स्थिरता अलग प्रकार की है। सत्त्वगुण की स्थिति में मन में विचार आता है, कि 'घंटी बज गई, उठो भई उठने का समय हो गया है, और तमोगुण के प्रभाव से व्यक्ति कहता है– पड़े रहो, थके हुए पड़े रहो, सोते रहो, उठना ही नहीं, जल्दी नहीं है, रोज ही तो उठते हैं, एक दिन नहीं उठेंगे तो क्या फर्क पड़ेगा।' पड़े रहो वाली, यह जो स्थिरता है, वो तमोगुण की है।

● सत्त्वगुण के कारण से जो स्थिरता होती है, वो अलग है। उसका नाम है–एकाग्रता, यानी एक विषय में मन का टिक जाना। मन एक जगह पर ज्ञानपूर्वक टिका रहे, वो स्थिरता सत्त्वगुण की है। दोनों में यही अंतर है।

● सत्त्वगुण के कारण जब मन एक विषय में टिक गया, तो कुछ देर के बाद रजोगुण बीच में कूद पड़ा और जो टिका हुआ मन था, उसको उखाड़ दिया। वो विक्षिप्त अवस्था हो गई या तमोगुण बीच में कूद गया, तो उसके प्रभाव से आलस्य आ गया, नींद आ गई या उसके कारण कोई और गड़बड़ी खड़ी हो गई।

● जब सत्त्वगुण के कारण मन टिका हुआ था, वो उखड़ जाएगा, उसको हम विक्षिप्त अवस्था बोलते हैं।

● सार यह निकला कि • विक्षिप्त अवस्था कभी रजोगुण के कारण और कभी तमोगुण के कारण भी होती रहती है।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

thearyasamaj.org

उपनिषदों में कर्म–सिद्धान्त

● डॉ. वेद प्रकाश वेदालंकार

पुरुषान्न परं किंचित् सा काष्ठा सा परागतिः" परमात्मा से बढ़कर और कुछ नहीं है, उसी की प्राप्ति जीवात्मा का अन्तिम लक्ष्य है। कठोपनिषद का यह वाक्य उपनिषद्–ग्रन्थों के उद्देश्य की ओर संकेत करता है। इस लक्ष्य–प्राप्ति के साधनों की दो श्रेणियाँ हैं, ज्ञान–मार्ग और कर्म मार्ग। कर्म शब्द का प्रचलित रूढी अर्थ है यज्ञ–यागादि सारे ब्राह्मणग्रन्थों में इसी की सम्पुष्टि है। यही पूर्व–मीमांसा का केन्द्र बिन्दु है। इसी का तीव्र विरोधी उत्तर मीमांसा अर्थात् शंकर का वेदान्त है। परन्तु उपनिषद् का स्वर इन सबसे कुछ भिन्न है।

मुण्डकोपनिषद् कठोर शब्दों में कर्मकाण्ड का विरोध करती है:

"प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपाः
अष्टादशोक्तमपरं येषु कर्म।
एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढाः
जरा मृत्यु ते पुनरेवापि यान्ति।।"

"यह यज्ञ रूपी नाव बहुत ही कच्ची है। यह कदापि इस संसार–सागर से पार नहीं उतार सकती। जो मूर्ख लोग इसी किश्ती में बैठकर पार जाने की अभिलाषा रखते हैं, वे बुढ़ापा और मृत्यु रूपी भँवरों में फिर फिर आकर गिरते हैं।" यज्ञ–यागादि का विवेचन उपनिषदों में अपवाद रूप से ही कहीं कहीं मिलता है। इसके विपरीत ज्ञान मार्ग ही ईश्वर की प्राप्ति का एक मात्र साधन है। इसकी सम्पुष्टि स्पष्ट शब्दों में की है। छान्दोग्योपनिषद् का प्रमुख वाक्य है–

"आत्मा वाऽरे ज्ञातव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।" श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा:–

"तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति।
नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।"

"केवल ब्रह्म को जानना ही मोक्ष का साधन है। इससे भिन्न अन्य कोई मार्ग मोक्ष प्राप्ति का नहीं।" इस प्रकार **"ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः, ... य एतद् विदुरमृतास्ते भवन्ति" "ईशं तं ज्ञात्वाऽमृदा भवन्ति"। "ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति"। तमेवं ज्ञात्वा मृत्युपाशांश्छिनत्ति"** इत्यादि वाक्य प्रायः उपनिषदों में इतस्ततः मिलते हैं। सभी उपनिषदों में अध्ययन से जो प्रभाव मन पर पड़ता है, वह कुछ इस प्रकार का है:–

"ज्ञान से ही मुक्ति होती है, ज्ञान से ही ब्रह्म की प्राप्ति होती है। कर्मों से जो सुख मिलता है, वह क्षणिक है। वह शाश्वत या नित्य नहीं हो सकता।"

परन्तु क्या मनुष्य बिना कर्म किए रह सकता है? इसका उत्तर उपनिषदों की सार–भूत भगवद्गीता में दिया है:–

नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वैः प्रकृतिजैर्गुणैः।।"

कोई मनुष्य क्षण भर भी कुछ कर्म किए बिना नहीं रह सकता। स्वाभाविक गुण उसे कर्म करने के लिए प्रवृत्त करते ही हैं। स्पष्ट है यदि वह इच्छापूर्वक कर्म नहीं करेगा तो विषयवासना उससे बुरे कर्म कराएँगी। बात प्रसिद्ध है "खाली मन शैतान का घर।" निठल्ला मनुष्य, मनुष्य न रहकर शैतान बन जाता है।

बिना कर्म किए कोई रह नहीं सकता और कर्म एक कच्ची नौका है, जिससे संसार–सागर पार नहीं किया जा सकता। इस परस्पर विरोध का समाधान ही उपनिषदों का कर्मसिद्धान्त है। "कर्म" शब्द का तात्पर्य है– कर्तव्य, धर्मानुकूल व्यापार। मनुष्य का मनुष्यत्व इसी में है कि वह अपने कर्तव्यों का पालने करे। इसीलिए मनुष्य योनि में भोग के साथ साथ कर्म का भी परिगणन है। यज्ञ यागादि कर्मानुष्ठान के साथ उपनिषदों का विरोध है, और कर्म के दूसरे तात्पर्य की यत्र–तत्र सम्पुष्टि।

उपनिषदों में प्रमुख ईशोपनिषद के आरम्भ में कहा है– **"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः"**– मनुष्य कर्म करता हुआ ही सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे। बिना किए उसे जीने का अधिकार भी उपनिषद् नहीं देती। इसी उपनिषद् की समाप्ति में जाकर कहा–

'हे क्रतो स्मर कृतंस्मर, क्रतो स्मर कृतं स्मर।"

'हे क्रतो! कर्म करने वाले जीव! जीवन भर किए हुए कर्मो का स्मरण कर। जीव का स्वरूप ही कर्ममय है। छान्दोग्योपनिषद में बतलाया:–

"त्रयोधर्मस्कन्धाः, यज्ञोऽध्ययनदानमिति।"

धर्म के तीन आधार हैं, यज्ञ, अध्ययन और दान। ये तीनों ही कर्ममय हैं। तैत्तरीयोपनिषद् में "ओम्" (परब्रह्म) के ज्ञान के लिए साधनों का जो उपदेश दिया गया है वह कर्ममय है–

"ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च। सत्यंच........ । तपश्च......।
दमश्च.....। मानुषं च......। प्रजा च .....। सत्यमिति
सत्यवचा राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः।
स्वाध्याय प्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः।"

सत्यवादी राथीतर केवल सत्य को ब्रह्मप्राप्ति का मुख्य साधन बतलाता है। तपस्वी पौरुशिष्टि तप को मुख्यता देता है, मौद्गल्य स्वाध्याय–प्रवचनन को। परन्तु उपनिषत्कार अब उनको ब्रह्मप्राप्ति का मार्ग मानते हैं और उनका उपदेश करते हैं। तैत्तरीयोपनिषद् के कर्ता ने सभी शुभ कर्मों को ब्रह्मप्राप्ति के लिए आवश्यक माना है।

यों उपनिषद वाक्यों में कहीं ज्ञान की प्रधानता प्रतीत होती है और कहीं कर्म (कर्तव्य, धर्मानुकूल व्यापार) की। इस प्रतीयमान परस्पर विरोध को ईशोपनिषद् की तीन ऋचाओं ने स्पष्ट कर दिया है।

"अन्धन्तम; प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः।।"

"जो लोग अविद्या अर्थात् केवल कर्म की उपासना करते हैं वे अन्धकार में पड़े रहते हैं और जो केवल विद्या अर्थात् ज्ञान में तल्लीन रहते हैं, वे उससे भी गहरे अन्धकार में डूब जाते हैं।

दूसरा मन्त्र है:–

"अन्येवाहुर्विद्यया अन्यदाहुरविद्यया।
इति शुश्रुम धीराणां ये न स्तद् विचचक्षिरे।।"

जो ज्ञानी लोग इन तत्त्वों को हमें बता गए हैं, उनमें हमने सुना है कि विद्या (ज्ञान) और अविद्या (कर्म) दोनों के पृथक् फल होते हैं।

वे फल क्या हैं? इसका उत्तर तीसरे मन्त्र में दिया गया है:–

"विद्यां चा विद्यां च यस्तद्वेदोमयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।"

"जो विद्या और अविद्या दोनों को जानता है, वह अविद्या (कर्म) द्वारा मृत्यु से पार होकर विद्या से अमृतत्व को प्राप्त करता है।"

मनुष्य को सुख की प्राप्ति अच्छे कर्मो से होती है। परन्तु अच्छे कर्म करना तभी सम्भव है, जब मनुष्य ज्ञानपूर्वक करे। ज्ञानपूर्वक शुभ कर्म करता हुआ मनुष्य इतनी उन्नति कर लेता है कि वह परमज्ञान तक पहुँच जाता है। तभी वह अमृत की प्राप्ति कर सकता है। छान्दोग्योपनिषद् में कहा है:–

"नाना तु विद्या चा विद्येति। यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरं भवतीति।"

"विद्या और अविद्या ज्ञान और कर्म दोनों भिन्न भिन्न हैं। उनमें सम्बन्ध यह है कि जो कर्म ज्ञानपूर्वक किया जाता है। वह श्रद्धा और तत्त्व बोध होने के कारण अधिक फलदायक होता है। कर्म की निष्फलता बतलाने वाले वाक्यों का भी यही अभिप्राय है, कि जो कर्म केवल कठपुतली बनकर अज्ञानपूर्वक किए जाते हैं, उनसे अमृतत्व की आशा रखना व्यर्थ है। इच्छापूर्वक समझ बूझकर जो शुभ कर्म किए जाते हैं, वे ही उत्कृष्ट फल देने वाले होते हैं। इसीफल के दो अंगों के रूप में मुक्ति और पुनर्जन्म का सिद्धान्त है।

वास्तव में न केवल ज्ञान मनुष्य को परमात्मा तक पहुँचा सकता है और न केवल कर्म। मूर्ति के सब पहलुओं को न देखकर केवल एक ही दिशा पर दृष्टि डालने वाले कई विद्वान् भी इस भ्रान्ति में पड़े रहते हैं कि केवल ज्ञान या केवल कर्म से मनुष्य का उद्धार हो सकता है। कर्महीन ज्ञान का संचय करके मनुष्य रट्टू तोता बन जाता है और ज्ञानहीन कर्म करके वह शास्त्र ढोने वाले गधे से बेहतर नहीं होता। वही ज्ञान सफल है जो अच्छे कर्मों का कारण बने। और वही कर्म कल्याणकारी है जो बुद्धिपूर्वक किया जाए। ज्ञान के बिना कर्म अन्धा है, तो कर्म के बिना ज्ञान लँगड़ा–लूला। ज्ञान और कर्म के इसी समन्वय को भगवद्गीता में योग कहा है:–

"योगः कर्मसु कौशलम्"

कर्म में चातुर्य अर्थात् विवेकपूर्ण किया गया कर्म ही योग है। गीता का निष्काम कर्म भी इससे भिन्न नहीं, ईशोपनिषद् में कहा है– "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः" हे मनुष्य! त्यागपूर्वक भोग कर। सकाम कर्म के फल में त्याग की भावना होनी असंभव है, यह त्यागभाव तभी संभव है, जब कर्म करते हुए फल के प्रति आसक्ति न हो। और इसके लिए कर्म का ज्ञानपूर्वक होना आवश्यक है। ज्ञान और कर्म का यह समन्वित रूप ही उपनिषदों का कर्म–सिद्धान्त है। यही व्यावहारिक है, कल्याणकारी है। मुण्डकोपनिषद् में इसी अर्थ को यों कहा है:–

"तदेतत् सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि
त्रेतायां बहुधां सन्ततानि। तान्याचरथ नियतं
सत्यकामाः, एष वः पन्था सुकृतस्य लोके।"

"वेदों के अनुसार ऋषियों ने जिन कर्तव्यों को जाना और जिनका उपदेश दिया, और जिन कर्मो का पूर्वकाल के लोग पालन करते रहे हैं। सत्य के अभिलाषियो! तुम अपने आचरण उन्हीं के अनुसार बनाओ। संसार में सत्कर्मी बनने का यही मार्ग है।"

इति शुभम्

57, माडल टाऊन,
अम्बाला शहर, हरियाणा
0171–2521440

पाठकों से

'आर्य जगत्' का 26 अप्रैल वाला अंक महात्मा हंसराज विशेषांक होगा इसलिये 19 अप्रैल, और 3 मई के अंक नहीं छपेंगें। पाठक कृपया नोट करें।

–सम्पादक

thearyasamaj.org

ईश्वर का नाम 'सच्चिदानन्द' क्यों व कैसे?

● मनमोहन कुमार आर्य

ईश्वर के अनेक नामों में से एक नाम **'सच्चिदानन्द'** भी है। प्रायः हम सुनते हैं कि जयघोष करते हुए धार्मिक आयोजनों में कहा जाता कि **'श्री सच्चिदानन्द भगवान की जय हो'**। यह सच्चिदानन्द नाम ईश्वर का क्यों व किसने रखा है? इसका तात्पर्य व अर्थ क्या है? इसी पर विचार करने के लिए कुछ पंक्तियाँ लिख रहा हूँ। सृष्टि के समग्र ऐश्वर्य का स्वामी होने के कारण इस सृष्टि के रचयिता, पालन कर्ता व संहारकर्ता को ईश्वर कहा जाता है। इस संसार में जितना भी वैभव या धन, दौलत जो ऐश्वर्य के ही भिन्न नाम है, इसका स्वामी केवल एक सृष्टिकर्ता ईश्वर है। ईश्वर के तीन प्रमुख कार्यों, सृष्टि की रचना, इसका पालन व प्रलय। इन कार्यों को करने वाला तथा सृष्टि की समस्त सम्पत्ति का स्वामी वही एक ईश्वर है, यह जान लेने पर अब सच्चिदानन्द शब्द व ईश्वर के स्वरूप पर विचार करते हैं। सच्चिदानन्द मुख्यतः तीन शब्दों व पदों को जोड़कर बनाया गया है जिसमें पहला पद है सत् दूसरा है चित और तीसरा पद आनन्द है। यह ईश्वर का स्वाभाविक स्वरूप अनादि काल से है व अनन्त काल अर्थात् हमेशा ऐसे का ऐसा ही रहेगा, इसमें कोई परिवर्तन कभी नहीं होगा, देश–काल–परिस्थितियों का इस पर कोई प्रभाव नहीं होगा।

सत् शब्द किसी के अस्तित्व की सत्यता को कहता है। ईश्वर सत् है, यदि ऐसा कहें तो इसका अर्थ होता है कि ईश्वर का अस्तित्व वास्तविक व यथार्थ है अर्थात् सत्य है। इसका विपरीत अर्थ करें तो कहेंगे कि ईश्वर का अस्तित्व होना मिथ्या नहीं है। ऐसा नहीं है कि ईश्वर हो ही न और हम कहें कि उसका अस्तित्व इस संसार व जगत में विद्यमान व उपस्थित है। इसी प्रकार से जिन पदार्थों को भी सत्य कहा व माना जाता है उनका अस्तित्व होता है और जिनका अस्तित्व नहीं होता वह मिथ्या पदार्थ होते व कहे जाते हैं। इससे यह ज्ञात हुआ कि ईश्वर की सत्ता अवश्य विद्यमान है, यह सत्य है, झूठ नहीं है। **अब दूसरे शब्द चित् पर विचार करते हैं।** चित् का अर्थ है चेतन पदार्थ। चेतन का अर्थ है कि उसमें संवेदनशीलता है, जड़ता नहीं। ईश्वर जड़ या भौतिक पदार्थ नहीं है। वह जड़ के विपरीत चेतन गुण वाला तथा भौतिक के स्थान पर अभौतिक पदार्थ है। जड़ पदार्थों में स्वतः कोई क्रिया नहीं होती, वह चेतन की प्रेरणा या ईश्वर द्वारा निर्मित प्राकृतिक नियमों के अनुसार होती है जिन्हें भी हम ईश्वर की प्रेरणा कह सकते हैं। **हम व हमारी आत्मा चेतन है, जड़ नहीं।** यह मस्तिष्क जो कि हमारी आत्मा का साधन है, इसकी सहायता से सोचती है और विचार करने का सामर्थ्य सभी चेतन आत्माओं में होता है। यदि आत्मा न हो तो मष्तिष्क निष्क्रिय ही रहेगा। इसका कोई सकारात्मक उपयोग नहीं होगा। आत्मा न केवल मस्तिष्क अपितु शरीर के सभी अंगों व इन्द्रियों का मन व मस्तिष्क की सहायता से अपने उद्देश्य की पूर्ति में साधन रूप में उपयोग करती है। शरीर में आत्मा द्वारा पैर का इशारा या प्रेरणा करने पर पैर चलने लगते हैं, रूकने का इशारा करने पर रूक जाते हैं। ऐसी ही सब अंगों की स्थिति है। **इसी प्रकार से ईश्वर भी मूल प्रकृति को प्रेरणा कर सृष्टि की रचना करते हैं और सृष्टि की अवधि पूरी होने पर इसकी प्रलय करते हैं। वह जीवात्माओं के कर्मों के साक्षी होकर उसके शुभाशुभ अर्थात् पुण्य–पाप कर्मों के फल देते हैं। उन्हें सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी होने के कारण सभी जीवों के अतीत व वर्तमान के कर्मों का पूरा–पूरा ज्ञान होता है। कोई भी जीव कर्म करने के बाद उसके फल को भोगे बिना छूटता नहीं है।** पुण्य कर्मों का फल सुख व अशुभ अथवा पाप कर्मों का फल दुख होता है। जन्म व मरण भी हमारे शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ईश्वर की व्यवस्था से प्राप्त होते हैं। यह था ईश्वर का चेतन स्वरूप और उस स्वरूप के द्वारा किए जाने वाले कुछ कार्य।

आनन्द भी ईश्वर का स्वाभाविक गुण है। वह आनन्द से युक्त व पूर्ण है। उसमें अपने लिए कोई इच्छा नहीं है। इच्छा का कोई उद्देश्य होता है। इच्छा तो तब हो जब कोई अपूर्णता या आवश्यकता हो। ऐसा ईश्वर में कुछ घटता नहीं है। वह सदा–सर्वदा–हर समय सुख की पराकाष्ठा से परिपूर्ण है और हमेशा रहेगा। आनन्द का गुण होने के कारण वह सदा शान्तचित्त रहता है। इसमें न क्रोध होता है, न कोई निजी कामना, न रोग, शोक और मोह अथवा राग व द्वेष। इस प्रकार से वह सदा स्थिर चित्त रहकर संसार का संचालन व पालन करता है। उसका यह आनन्द का गुण हम जीवों के लिए बहुत लाभदायक है। हम विधिपूर्वक स्तुति–प्रार्थना–उपासना करके उससे इच्छित कामनाएँ सिद्ध व पूरी कर सकते हैं। जीवात्मा का स्वरूप ईश्वर की तुलना में सत्–चित्–आनन्द की अपेक्षा सत्–चित् मात्र ही है। जीवात्मा में आनन्द का अभाव है। इसी कारण वह जन्म–जन्मान्तरों में सुख व आनन्द की खोज व प्राप्ति में भटकता रहता है। भौतिक पदार्थों के पीछे भागता है, आधुनिक व वर्तमान युग में विवेकहीन होकर मनुष्य कुछ अधिक ही दौड़ लगा रहा है, उसमें क्षणिक सुख है जो कि अस्थाई है। वह ईश्वर से प्राप्त होने वाले आनन्द की तुलना में नगण्य हैं। ईश्वर व उसके आनन्द को विवके से ही जाना जा सकता है। इसी कारण विवेकशील धार्मिक लोग धन व भौतिक पदार्थों के पीछे दौड़ने के स्थान पर ईश्वर की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते हैं। यही वास्तविक धर्म–कर्म होता है। स्तुति, प्रार्थना, उपासना, यज्ञ, अग्निहोत्र, सेवा, परोपकार, माता–पिता–अतिथियों का सत्कार आदि से आनन्द की प्राप्ति व दुःखों से छूटने के लक्ष्य की प्राप्ति होती है। ईश्वर का आनन्द कैसे प्राप्त होता है? इसका विधान कुछ ऐसा है कि जैसे स्विच आन करने पर हमारे घरों के बल्ब जल उठते हैं वैसे ही उपासना में ईश्वर से सम्पर्क व कनेक्शन लग जाने अर्थात् ध्यान में स्थिरता व निरन्तरता आ जाने पर उसका आनन्द हमारी आत्मा में प्रवाहित होने से हमारे दुःख व क्लेश दूर होकर हम आनन्द से भरपूर हो जाते हैं। सिद्ध योगियों को यह आनन्द मिलता है। योग में आंशिक सफलता मिलने पर भी कम मात्रा से यह आनन्द प्राप्ति का क्रम आरम्भ हो जाता है। योगी जितना आगे बढ़ता है उतना ही अधिक आनन्द उसको प्राप्त होता है। इस प्रकार हमने आनन्द स्वरूप पर भी विचार किया और कुछ जानने का प्रयास किया है।

अतः सत्, चित् व आनन्द से युक्त होने के कारण ईश्वर के प्रमुख नामों में से एक नाम **''सच्चिदानन्द''** भी है। हम आशा करते हैं कि पाठक इसे जानने के बाद ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना अर्थात् क्रियात्मक योग की ओर प्रेरित हो सकते हैं और होना भी चाहिए। यौगिक जीवन ही आदर्श मानव जीवन है। इसके विपरीत तो भोगों से युक्त जीवन ही होता है जिसका परिणाम जन्म–जन्मान्तरों के बन्धन, रोग, दुःख व अवनति का मिलना होता है। मार्ग का चयन हमारे हाथ में है। जिसे योग मार्ग अच्छा लगे वह उस पर चले और जिसे भोग मार्ग अच्छा लगे वह उस पर चल सकता है, फल देना ईश्वर के हाथ में हैं। प्रसिद्ध सत्य लोकोक्ति है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र और फल भोगने में परतन्त्र है।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन: 09412985121

वैदिक प्रार्थना

**स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्रा देवाऽअमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।**

यजु. 32.10

Thou art our father,
our friend, our anchor
and our creator.

Thou knowest whatever is
happening
And one can reach the
Destination only with Your grace.

**तू हमारा बन्धु प्यारा, तू हमारा जन्मदाता
तू सहारा, तू अधारा, तू हमारा है विधाता।
विश्व में जो कुछ जहां है, ज्ञान उस सबका तुझे है
लक्ष्य तक वह ही पहुंचता राह तू जिसको दिखाता।**

thearyasamaj.org

मानव! जियो छन्दमय जीवन

● देवनारायण भारद्वाज

संसृति अर्थात् संसार जो सदैव सरकता रहता है, रुकता नहीं, वह एक काव्य या लय के साथ आगे बढ़ता रहता है। सागर–सरिता के किनारे निकल जाइए तो उनकी लहरें एक ध्वनि–संगीत छेड़ती चलती हैं, उद्यान में निकल जाइए तो वृक्षों के पत्ते हवा की तरंगों से मिलकर एक गीत गुंजित करते मिलते हैं, पौधों के पुष्पों पर रंग–बिरंगी तितलियाँ एवं भ्रमर अपने गुंजन के साथ नृत्य करते दिखाई देते हैं। आज के अतीव कष्टकर पर्यावरण के प्रदूषण के बाद भी अनेक स्थलों पर प्रातः–सायं पक्षियों के समूह कलरव–कीर्तन करते मिलते हैं। वेद भगवान बोल पड़ते हैं :

अन्ति सन्तं न जहाति अन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।। (अथर्व. 20.8.32)

मनुष्य परमेश प्रभु को कभी त्याग नहीं सकता, क्योंकि वह उसके घनिष्ठ सम्बन्ध से जुड़ा–सन्निकट है– यहाँ तक कि वह उसके आत्मा में ही व्याप्त है, पर आश्चर्य यह है कि मनुष्य उसकी ओर देखता नहीं। जो आत्मानुभूति कर लेते हैं वे तो बधाई के पात्र हैं; किन्तु जो अपनी प्रत्यक्ष आँखों से ही देखना चाहते हैं, वे उसकी सृष्टि रूपी काव्य को देख लें। गुणों का आभास करके गुणी के साथ प्रवास किया जा सकता है। मनुष्यकृत नाटक एक दो बार देखने पर ही पुराना पड़ जाता है, किन्तु यह ईश्वरीय काव्य कभी पुराना नहीं पड़ता और कभी मरता भी नहीं, और न जीर्ण–शीर्ण होता है। हे मनुष्य! तू ईश्वर के वेद काव्य और इसी के आधार पर निर्मित सृष्टि काव्य को देखता हुआ–इसी में सृष्टि कर्ता परमेश्वर के दर्शन किया कर। 'वैदिक विनय' में आचार्य अभयदेव विद्यालंकार ने कुछ ऐसा ही दिग्दर्शन कराया है। जब यह संसार व जीवन प्रभु का एक काव्य है तो इसमें कोई लय व छन्द होना चाहिए। इसका संकेत हमें वेद मन्त्र से मिलता है :

छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा मातेव पुत्रं पिपृतेह युक्ताः।। (अथर्ववेद 5.26.5)

सृष्टि काव्य का अनुगमन करते हुए हम जीवन को यज्ञ बनायें अर्थात् प्रभु, प्रज्ञा व प्रकृति का पूजन अर्थात् समन्वय व उपयोग करना सीखें, साथ ही बड़ों से सम्मान का व छोटों से स्नेह का संगतीकरण करते हुए अपने द्वारा कमाई सम्पदा क कुछ अंश परहित अर्थात् दान में लगाने वाले बनें। अपनी प्राण ऊर्जा को राष्ट्रहित में आहुत करते हुए अपनी पूर्णता या सफलता इस बात में समझें जिस प्रकार कोई माता पुत्र का पालन व पोषण करती है। यह प्रक्रिया दोनों ओर से चलती है अर्थात् माता से पुत्र की ओर और पुत्र से माता की ओर। जिन दिनों ये पंक्तियाँ अंकित की जा रही हैं, उन दिनों अमर शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल के बलिदान के समारोह मनाए जा रहे हैं। उन्होंने अपनी ओजस्वी कविता में यही भाव भर दिए थे। यथा–

खेलेने दो आज नाव,
कल कर पतवार गहे न गहे।
जीवन सरिता में शायद,
फिर ऐसी रसधार बहे न बहे।
अन्तिम साँस निकलने तक,
बिस्मिल की अभिलाष यही,
तेरा वैभव अमर रहे माँ,
हम दिन चार रहे न रहे।।

प्रजा–पुत्र अपनी मातृभूमि से जीवन प्राप्त करते हैं तो उस मातृभूमि के स्वाभिमान की रक्षा के लिए काव्य व गीत गाते हुए बलिदान होने को उद्यत हो उठते हैं। उत्सर्ग की कठोर भावना की ओर अधिक न बहते हुए सृष्टि सृजन के मनोहारी काव्य की ओर वापिस लौटते हैं। राजा भोज सृष्टि व काव्य दोनों के प्रेमी थे। वे सृष्टि में काव्य और काव्य में सृष्टि का अवलोकन कर हर्षित हुआ करते थे। इस सम्बन्ध में कोई कवि उनके दरबार में काव्य पाठ किया करता था, तो उसे एक लाख स्वर्ण मुद्राओं का पुरस्कार दिया करते थे। सृष्टि के दृश्यों को देखते हुए चार मित्र अपनी एक–एक पंक्ति बनाकर दरबार में पहुँच गए। उन्होंने जैसा देखा वैसा ही राजा के सामने बोल दिया। एक ने अपनी पंक्ति सुनाई–''रहैटा धनर–धनर धन्नाय'' दूसरे ने बोला– ''कोल्हू का बैल खड़ा भूसा खाय'' तीसरे ने सुनाया– ''तरकस बाँधे तरकस बन्द'' तभी चौथे ने अपनी काव्य पंक्ति ''राजा भोज हैं पुनों के चन्द'' सुनाई।

चौथे व्यक्ति की पंक्ति को सुनकर राजा आक्रोशित हो उठे। उन्होंने कहा उपरोक्त तीनों की पंक्तियाँ तो ठीक हैं, उनमें तालमेल है किन्तु चौथे की पंक्ति चाटुकारता की द्योतक है। इसलिए कविता अपूर्ण रहने के कारण पुरस्कार तो नहीं दिया जाएगा, प्रत्युत दण्ड दिया जाएगा। तभी चौथा काव्य कार बोल उठा, महाराज यह पंक्ति मेरी नहीं है अपितु आपके कविमंत्री ने बदल दी है। क्योंकि मेरी पंक्ति को वे शोभाजनक नहीं मानते थे और कहते थे इसे सुनाओगे तो राजा रुष्ट होगें और तुम्हें जेल में पहुँचा देंगे। राजा ने आदेश दिया कि अपनी मौलिक पंक्ति सुनाओ। उसने अपनी पंक्ति जोड़कर चारों पंक्तियाँ इस प्रकार दोहरा दीं–

रहैटा धनर–धनर धन्नाय।
कोल्हू का बैल खड़ा भूसा खाय।
तरकस बाँधे तरकसबन्द।
राजा भोज हैं मूसल चन्द।

यह सुनकर राजा भोज मुस्करा दिए और प्रसन्न होकर वाह–वाह करने लगे और इन मूर्खों को एक लाख के दान की आज्ञा कर दी। राजा के कवि मंत्री ने इन कुपात्रों को दान देने का कारण पूछा तो उन्होंने गम्भीर होकर उत्तर दिया– ''आज तक जो कवि आए, उन्होंने मेरे अभिमान और अज्ञान को ही बढ़ाया, किसी ने मुझे बलि व विक्रम के समान और किसी ने मेरे प्रताप को सूर्य एवं चन्द्र से भी अधिक बढ़ा दिया। किन्तु जिन्हें तुम मूर्ख कहते हो, उन्होंने ठोकर लगाकर मुझे जगा दिया। मैं स्वयं को मूसल चन्द ही समझता हूँ। मूसल धान को कूटता ही रहता है परन्तु उसे चावल का रस नहीं मिलता। मैं संसार रूपी ओखली में कुटाई–पिटाई ही करता रहा, परलोक के लिए मैं कुछ नहीं कर सका। अब मुझे सावधान होना है और आत्मज्ञान को प्राप्त करना है। इन्होंने ठीक ही कहा है कि वीर लोग इस संसार में मृत्यु से मुकाबले के लिए ज्ञान से भरा तरकस बाँधते हैं और अविवेकी विलासीजन कोल्हू के बैल की भाँति खड़े–खड़े भूसा का भोग करते रहते हैं। यह संसार का रहटचक्र चल रहा है। ऊपर की बाल्टियाँ खाली हो जाती हैं, नीचे की भर जाती हैं। फिर वे ऊपर आती हैं और खाली हो जाती है। इसी प्रकार आज कोई ऊपर है, अगले क्षण नीचे, आज भरा है कल खाली। सम्पत्ति की ऐसी ही अस्थिर हरियाली है। राजा भोज का यह निष्कर्ष सुनकर दरबार दंग रह गया। पं. बिहारी लाल शास्त्री काव्यतीर्थ का यह संदर्भ उनके 'दृष्टान्त सागर' से बूँदें लेकर आप तक पहुँचा दिया है।

प्रकृति व परमेश्वर की काव्य–कृतियाँ सर्वत्र बिखरी रहती हैं।

मंत्र–अथर्ववेद (18.1.17) यही संकेत कर रहा है।

त्रीणिच्छन्दांसि कवयो वियेतिरे पुरुरूपं दर्शतं विश्वचक्षणम्।
आपो वाता ओषधयस्तान्येकस्मिन भुवन आर्पितानि।।

तत्त्वदर्शी पुरुष विभिन्न प्रकार यत्न करते और देखते हैं कि अनन्त रूपों में दर्शनीय पदार्थ आनन्द की मर्यादा में रहते हुए जन साधारण के लिये अभिलाषित होते हैं। वे तीन पदार्थ जल, वायु तथा औषध हमारे लिए वांछनीय हैं और ये तीनों एक ही भवन में ठहरे रहते हैं और हमें मिलते रहते हैं। इनको छन्द क्यों कहा? इसीलिए कि इनका मर्यादा व अनुशासन में रहकर प्रयोग किया जाय। पीने के लिए जल, श्वाँस लेने के लिए वायु और आहार के लिए अन्न, प्राणिमात्र के लिये जीवनाधार हैं। जैसे–किसी कविता अथवा गीत के छन्द में एक मात्रा भी न्यूनाधिक हो जाती है तो उसका छन्द असन्तुलित होकर कर्ण–कटु हो जाता है वैसे ही इन तीनों पदार्थों का न्यूनाधिक प्रयोग भी शरीर के लिए हानिकारक हो जाता है। इतना ही नहीं व्यक्ति आह्लाद के स्थान पर अवसाद में डूब जाता है। वर्तमान विस्तृत प्रीतिभोजों में ऐसे ही कुछ दृश्य उपस्थित होते हैं जिनमें व्यंजनों की भरमार होती है जो पेट में भर लिए जाते हैं वायु और जल के लिए पेट में स्थान ही नहीं बचता है। इन पदार्थों के अपमिश्रण की बात तो पृथक है।

जैसा खाए अन्न, वैसा बने मन, जैसा पिए पानी, वैसी बने वाणी और जैसी हो वायु वैसी हो आयु। छन्द अर्थात् मर्यादित आनन्द या सुख के लिए इनके उपयोग का ध्यान रखना आवश्यक है। अपमिश्रण ही नहीं, इनके संग्रहण का स्रोत कितना सात्विक है–यह भी व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करता है। एक राजा ने एक सन्त को अपने राजमहल में ठहराया। उनका खूब स्वागत सत्कार किया। सन्त उसी स्नानागार में स्नान करते थे जिसमें राजा व रानी भी स्नान करते थे। सन्त राजमहल से विदा हो गए पता चला कि रानी का बहुमूल्य हीरों का हार गायब है। खूब खोजने के बाद भी नहीं मिला। यकायक एक दिन वही सन्त वापस लौटे और राजा का गुम हुआ हार उन्हें पकड़ा दिया। राजा प्रसन्न हुआ और बोल पड़े–आश्चर्य! यह हार आपके पास कैसे? मैंने ही चुराया था यह हार। आपके ऊपर मैं सन्देह कर ही नहीं सकता था, फिर लौटाने क्यों आ गए। राजन्! आपने जो अपने राजकोषीय अन्न से मेरा आतिथ्य किया था, सात्विकता की उपेक्षा कर मैं उसे खा गया। मेरा मन दूषित हुआ और मैं चोर हो गया निरन्तर हुए भंयकर दस्तों से जब उसका दुष्प्रभाव जाता रहा; और मैं इस हार को वापस करने आ गया। सारांश यह है कि संसार एवं सर्जक का काव्य सहज रूप से प्रभावित होते रहने पर ही सबका कल्याण है। इसका छन्द भंग होने पर पर्यावरण का ही नहीं प्राणिमात्र का विनाश अवश्यम्भावी है।

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम)
रामघाट मार्ग, अलीगढ़–202001 (उ. प्र)

thearyasamaj.org

शिव भक्तों को शिव का संदेश

● आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा

ओम् पदवाच्य परमात्म ब्रह्म अजर है, अमर है, निराकार स्वरूप है। वह **शिव** = कल्याण करने वाला है, वह नित्य, पवित्र है, वह सत्यस्वरूप सत्ता है। उपनिषद् ने कहा है–

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। तैत्ति. उप. 2/9।।

अर्थात् वह ब्रह्म सत्य स्वरूप है, ज्ञानरूप है, **अनन्तम** = अनन्तम सर्वव्यापक है, आदि अन्त से रहित है, **ब्रह्म** = सबसे बड़ा है।

उपास्य परमब्रह्म

यह सत्य स्वरूप निराकार परब्रह्म सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का शासक है। वह ही सबका उपास्य है। वेद में सर्व शासक की उपासना का निर्देश करते हुए कहा है–

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव।
यऽईशेऽस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

यजु. 23/3।।

अर्थात् **यः** = जो परमात्मा, **प्राणतः** = प्राण वाले और **निमिषतः** = अप्राणी रूप, **जगतः** = जगत का, **महित्वाः** = अपने अनन्त महिमा से, एक **इत्** = एक ही रास्ता, **बभूव** =शासन करने वाला है, **यः** =जो, **अस्य** =इस जगत के, **द्विपदः चतुष्पद** =दो पैर वाले मनुष्य आदि और गौ, अश्व आदि चौपाये प्राणियों के शरीर की, **ईशे** = रचना करता है, उनको ऐश्वर्य प्रदान करता है, उस, **कस्मै** = सुखस्वरूप (**सुख वै कम्**, गोपथ ब्रा. 2/6/3,**कं वै प्रजापतिः**, शतपथ ब्रा.2/4.13), **देवाय** =दिव्यस्वरूप ऐश्वर्य प्रदाता के लिए, **हविषा** =विशेष भक्तिभाव से, **विधेम** =ध्यान कर, उपासना करें।

मन्त्र का भाव है जो जड़ चेतन जगत का आधार और शासक है, मनुष्य, पक्षी, वृक्ष आदि के शरीरों का निर्माण करता है एवं उन्हें कर्म करने का ऐश्वर्य प्रदान करता है वह परमात्मा उपास्य है, उसकी ही उपासना करने योग्य है।

शिव प्राप्ति के भक्तों के निरर्थक प्रयास

यह शिवरात्रि का पर्व परमात्मा की उपासना का प्रेरक पर्व है। इस पर्व पर भक्त जन **शिव = कल्याणकारक** परमात्मा को प्राप्त करने के लिए व्रत, उपवास करते हैं। नगर, नगर, ग्राम ग्राम में स्थापित शिव मन्दिरों में जलधारा, पुष्पमाला, बेलपत्र, चन्दन आदि चढ़ाते हैं, कीर्तन करते हुए जगाते हैं। अपनी समझ के अनुसार शिव की प्राप्ति के लिए अनेक प्रयत्न करते हैं। भक्तों के शिव प्राप्ति के ये उपाय निरर्थक उपाय हैं, क्योंकि ये उपाय आडम्बर स्वरूप हैं।

शिव प्राप्ति का उपाय सत्य

निराकार, सत्यस्वरूप शिव ब्रह्म की प्राप्ति, उपलब्धि का मार्ग बताते हुए मुण्डकोपनिषद् का निर्देश है–

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो य पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।

मुण्ड.3/1/5।।

अर्थात् **सत्येनः** = सत्यस्वरूप परमात्मा सत्य से, **लभ्यः** = प्राप्त होता है, **हि एषः** = यह निश्चय से, **आत्मा** = परब्रह्म, **तपसा** = स्वाध्याय से (**तपो हि स्वाध्यायः**, तैत्ति. आ. 2/14/2), **सम्यग् ज्ञानेन** = सही ज्ञान से, **ब्रह्मचर्येण** = ब्रह्मचर्य से, **नित्यम्** = नित्य अभ्याहत रूप से प्राप्त होता है, यह ब्रह्म **ज्योतिर्मयः** = प्रकाशपुञ्ज रूप, **शुभ्रः** = निर्मल, दीप्त, **हि** = ही, **अन्तः शरीरे** = शरीर के अन्दर विद्यमान है, **यम्** = जिसको, **क्षीणदोषाः** =शरीर, मन, बुद्धि आदि के मल नष्ट वाले, **यतयः** = यति, संयमी, पश्यन्ति = साक्षात्कार करते हैं।

उपनिषद् वचन का तात्पर्य है कि परमात्मा सत्यस्वरूप है, निराकार है और वह सत्यस्वरूप सत्य से ही प्राप्त होता है। स्वाध्याय सही ज्ञान एवं **ब्रह्मचर्येण**=इन्द्रियों के नियमन से प्राप्त होता है और उसे प्राप्त करने के लिए अन्यत्र भटकने की आवश्यकता नहीं है। वह तो सत्यस्वरूप, शुभ्र, ज्योतिर्मय रूप से अन्दर है, शरीरों में विद्यमान है। ज्योतिर्मय शिव ब्रह्म को वे ही लोग प्राप्त करते हैं, साक्षात्कार करते हैं, जो क्षीणदोष होते हैं, जिनके राग, द्वेष, लोभ, मोह, काम आदि दोष नष्ट हो जाते हैं।

असत्याचरण के नमूने

आज शिव भक्त सत्याचरण के महत्त्व वाले नहीं है। झूठ, ईर्ष्या, द्वेष, काम, लोभ, मोह आदि से प्रायः सभी ग्रस्त हैं, असत्याचरण का सर्वत्र साम्राज्य है। व्यक्ति, परिवार, समाज, सेवा, सत्ता, अध्यात्म आदि में लगे सभी असत्याचरण से लिप्त हैं। व्यक्ति का जीवन खरा जीवन नहीं है, खोटेपन का दाग लगा हुआ है, रहता कहीं हैं, बताता कहीं है। परिवार को देखें, तो परिवार के लोग एक दूसरे से झूठ बोलकर सम्पत्तियों पर अधिकार जमा रहें हैं, विद्यार्थी झूठ के सहारे डिग्रियाँ बटोर रहे हैं, शिक्षक पैसे वसूल रहे हैं, संतानें चरित्रहीन हो रही हैं, वकील दोषी को छोड़ रहे हैं और निर्दोषी को जेल में डलवा रहे हैं, डॉक्टर चिकित्सा को कम, गुर्दे आदि का व्यापार अधिक कर रहे हैं, व्यापारी मिलावट के पदार्थ बेच रहे हैं, शासनाधिकारी राष्ट्रीय जाति का घोटाला कर रहे हैं, अध्यात्मवादी भोग, विलास के तहखाने बना रहे हैं, स्त्री जाति की अस्मिता से खिलवाड़ कर रहे हैं एवं ईश्वर के नाम पर मत मतान्तर खड़े कर रहे हैं। जहाँ से भी देखें बस असत्याचरण ही असत्याचरण उद्दीप्त हो रहा है। सत्याचरण बस पशुओं में होता दिखाई दे रहा है। पशु ही है, जो न किसी को धोखा देते हैं और न ही किसी को ठगते हैं।

शिवभक्तों को शिव का संदेश

सृष्टि के प्रत्येक मनुष्य का परमात्मा को प्राप्त करने का अधिकार है वह अधिकार तभी सफलीभूत हो सकता है जब सत्य का आचरण होवे। सत्य के आचरण से परमात्मा की प्राप्ति के द्वार मार्ग, खुल जाते हैं। सत्य मनुष्यता की पहचान है, उत्तमता का आधार है। सत्य से ही जय होती है, सत्यसे ही धन, सम्पत्ति बढ़ती है। बहुत से लोग मानते हैं कि हार, जीत के प्रसंगों में झूठे गवाह न हों, तो जीत असम्भव है, सत्य के द्वारा व्यापार नहीं चलेगा आदि आदि कथन मात्र आत्म धोखा है, क्योंकि झूठ के कार्य तभी तक पनपते हैं जब तक अग्रिम व्यक्ति को हमारे झूठ का पता नहीं होता। झूठ का पता लगने पर सब नष्ट हो जाता है।

सत्य ही सुख और कल्याण का कारक है, असत्य नहीं। असत्याचरण नहीं दूसरों के लिए हानिकारक है वहाँ अपने लिए भी हानिकर है। मनु महाराज तो यहाँ तक कहते हैं कि झूठ, अधर्म से कमाए हुए धन का दण्ड जन्म जन्मान्तरों तक भोगना पड़ता है। यथा–

यदि नात्मनि पुत्रेषु न चेत् पुत्रेषु नप्तृषु।
न त्वेवन्तु कृतोऽधर्मः कर्त्तुर्भवति निष्फलः।।

मनु. 4/173।।

अर्थात् असत्य, अधर्म का फल यदि असत्य, अधर्म करने वाले व्यक्ति की विद्यमानता में न मिल पाए, तो उसका फल पुत्रों को मिलता है, यदि पुत्रों को न मिले तो नाती =पौत्रों को अवश्य मिलता है। पर ऐसा कभी नहीं होता कि किया गया अधर्म निष्फल होवे। तात्पर्य हुआ झूठ, धोखा, अधर्म आदि का फल अवश्य ही मिलता है।

जीवन सत्यमय बने, धर्मपूर्वक कर्म हो, एतदर्थ परब्रह्म शिव का सन्देश है शिवो भूः सखा, अर्थात् हे मित्र जीव तुम शिवः = मंगलकारी होओ। पूरा मन्त्र है–

एते स्तोमा नरां नृतम तुभ्यमस्मद्र्यञ्चो ददतो मघानि
तेषामिन्द्र वृत्रहत्ये शिवो भूः सखा च शूरोऽविता च नृणाम्।।

ऋ. 7/19/10।।

अर्थात् हे **नराम**= मनुष्यों के मध्य, **नृतमः**= उत्तम मनुष्य बन, **एते स्तोमा**= ये प्रशंसनीय कर्म एवं, **मघानि**= धन, ऐश्वर्य, **अस्मदञ्चः**= मुझसे दीप्त हुए, **तुभ्यं ददतः**= तुम्हें प्रदान करते हैं, **इन्द्र**= हे ऐश्वर्यवाली जीवात्मन्, **तेषां नृणाम**= उन मनुष्यों के मध्य, **वृत्रहत्ये**= शत्रुओं को दूर करने के लिए, **शूरः**= पराक्रम होओ, **च अविता**= और रक्षा करने वाले बनो, **च**= और, **सखा**= मेरे मित्र, **शिवो भूः**= कल्याणकारी बन।

तात्पर्य हुआ परमपिता परमात्मा ने अनेक प्रशंसनीय उत्तम धन, धान्य प्रदान किए हैं, वे ईश्वर के उत्तम दान मनुष्यों में उत्तम मनुष्य के लिए हैं और उस मनुष्य के लिए हैं जो पराक्रम कर दूसरों की और अपनी बुराईयों को दूर करता है एवं सबका **शिवः**= कल्याण, **भूः**=करते हैं।

जीवात्मा परमात्मा का अनादि काल से **सखा**= मित्र है। परमात्मा शिव है, सत्यस्वरूप है, तो उसका उपासक सत्यं शिवं सुन्दरम् का उद्घोष करने वाला जीवात्मा भी सत्याचरण कल्याण करने वाला होवे, यह शिवरात्रि का, शिव परमात्मा का सन्देश है।

सत्य का लाभ

सत्य और असत्य दो विरोधी धर्म हैं। ये विरोधी ही नहीं, नितान्त घातक भी है। सत्य को मन, वचन, कर्म से धारण करने वाला व्यक्ति देव बन जाता है एवं असत्य, अधर्म का आचरण करने वाला व्यक्ति खाने, पीने, जीने वाला सामान्य मनुष्य ही रहता है। शतपथ ब्राह्मण में कहा है–

सत्यं चैवानृतं च सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः।
स वै सत्यमेव वदेत्,
एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत् सत्यं
तस्तात् ते यशो यशो ह भवति।

शत. ब्रा.1/1/14–5।।

अर्थात् सत्य और अनृत ये दो हैं। देव सत्य हैं, मनुष्य अनृत= झूठ हैं। वह निश्चय से सत्य ही बोले, इसके लिए देव सत्यरूपी व्रत का आचरण करते हैं इससे उनको यश प्राप्त होता है।

स्वर्गः= सुख विशेष कौन नहीं चाहता? सभी सुख की कामना करते हैं, ईश्वर से याचना करते हैं। उस सुख विशेष का निमित्त सत्य है। तैत्तिरीय आरण्यक में कहा है–

सत्यं परम्, परं सत्यम्, सत्येन न सुवर्गाल्लोकाच्च्यवन्ते कदाचन,
सतां हि सत्यं तस्मात् सत्ये रमन्ते।

तैति.आ.10/62।।

अर्थात् सत्य **परम**= उत्कृष्ट है, उत्कृष्टता ही सत्य है। सत्य के आचरण से कोई भी कभी भी, **सुवर्गात**= सुख विशेष से च्युत नहीं होते। सत्य सन्मार्ग पर चलना सत्यपुरुषों का आचरण है,

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

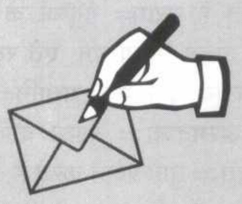

पत्र/कविता

विफल हुए जब दयानंद

"योग निष्ठ दयानंद आदित्य–ब्रह्मचारी।
बैठे थे गंगा तट पर, था दृश्य मनोहारी।।

इतने में एक नारी, दुर्दैव की सतायी।
प्रिय पुत्र का लिये शव, रोती बिलखती आयी।

वृद्ध पति मर चुके थे, इस युवती को छोड़।
शिशु भी चला दुख ऊब, मातृत्व ममता तोड़।।

ढंकने को उसके तन पर साड़ी नहीं था पूरा।
शिशु के लाश पर भी था कफन अधूरा।।
माँ ने कफन को खींच, बेकफन ही अपने।
प्यारे शिशु के शव को गंगा में बहाया।।
देवी दुखी दरिद्रा यूँ अपने देश–नारी।
रोये वो विफल होकर परमार्थ के पुजारी।।

सोचा, लगे थे जिनके ठट वस्त्र–अन्न–धन के।
हा शोक, आज उनको लाले पड़े कफन के।।
बंधन में ग्रस्त करते क्रंदन हैं देश के जन।
मैं कर रहा हूँ बैठा एकांत मोक्ष–चिंतन।।
मैं मोक्ष का अकेला आनंद न चाहूंगा।
कल्याण–पथ करोड़ों मनुजों को बताऊंगा।।

प्रेषक–निवेदन–आर्यप्रह्लाद गिरि
निंगा, आसनसोल
मो. 9735132360

(प्रेषक के अनुसार यह कविता 30 वर्ष पहले छपी थी।
यदि कुछ पंक्तियाँ शेष हो तो विद्वत–जन लिख भेजें– संपादक)

भारत माँ के वीर सपूतों शहीदों को याद कर सार्थक सम्मान दें।

23 मार्च का दिन भारतीय इतिहास में वो महत्वपूर्ण दिन है इसीदिन गुलाम भारत देश को विदेशी शासकों की लम्बी गुलामी से मुक्ति दिलाने के लिये क्रांति लड़ाई लड़ते हुए महान देशभक्त, क्रांतिकारी सरदार भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद विस्मिल इत्यादि ब्रिटिश शासकों द्वारा ही दी गई कठोरतम सजा को हंसते हंसते स्वीकार करते फांसी के फंदें को चुमते हुये "भारत मां की जय" का नारा लगाकर शहीद हो गये। हाल ही में 23 मार्च को शहीद दिवस के रूप में मनाया गया है। सच पूछो तो हमारे भारत देश को विदेशी दासता से मुक्ति इन महान शहीद क्रांतिकारी सपूतों की बदौलत हासिल हुई है। जिसके कारण सभी देशवासी लोग सुख व चैन की सांस लेकर फल फूल रहे है। वास्तव में आज के हालात देखें तो वर्तमान अखण्ड भारत की एकता, अखण्डता व प्रभुसत्ता के अलावा स्वतन्त्रता गंभीर खतरे में पड़ चुकी है। जिसका कारण देश की आज़ादी की प्राप्ति के 66 वर्ष बाद भारतीय राजनीति में बड़े पैमाने पर पर फैल रहा भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता, नैतिक पतन व राष्ट्रीय चरित्र का खोखलापन होना है। जो कि बड़े दु:ख व शर्म की बात है। आज देश की स्वतन्त्रता को सुरक्षित व मजबूत बनाने के लिये जरूरी है कि हम सब देश की आज़ादी के दीवाने क्रांतिकारी देशभक्त शहीद सपूतों व महापुरुषों को यथासंभव व हर तरह से राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान उनकी आदर्शवादी नीतियों का पालन करके सार्थकरूप में दें। खासतौर पर देश की युवा पीढ़ी को इन शहीद क्रांतिकारी देशभक्त सपूतों, महापुरुषों के जीवन चरित्र के बारे में व देश को दिये गये महत्वपूर्ण योगदान के बारे में अवगत कराते रहना चाहिए।

देशबन्धु
R2.127 सन्तोष पार्क,
उत्तम नगर, नई दिल्ली–110 059

****

1881 की जनगणना में दयानन्द जी को आर्य और वैदिक धर्मी नहीं लिखा गया था।

तत्कालीन परतन्त्र भारत के वायसराय ने जनगणना के सरकारी फार्म में हिन्दु–मुस्लिम–ईसाई–सिख–बौद्ध–जैन के कालम रखे थे। स्वामी दयानन्द के आर्य तथा वैदिक धर्म के कालम रखने के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया गया था जबकि दयानन्द का अनुरोध उचित था क्योंकि सिख–बौद्ध–जैन के कालम जब रखे जा सकते हैं तब आर्य का कालम भी हो सकता है। वास्तव में हिन्दू–मुस्लिम–ईसाई के कालम ही होने चाहिए जब सिख–बौद्ध–जैन के कालम अब भी चल रहे हैं तब आर्य का कालम भी शुरू होना चाहिए। मेरा गृहमंत्री को निवेदन है 2021 की जनगणना में आर्य और वैदिक धर्म का कालम भी शुरू हो जाय। जो काम दयानन्द के सामने नहीं हुआ वह काम हमें ही तो करना है।

वीर सावरकर पुस्तकालय एवं वाचनालय

इन्द्रदेव (म्यंमार वाले) सिद्धांत भूषण
18/186 टीचर्स कॉलोनी
बुलन्दशहर (उ.प्र.)

****

अंधेरे में जो बैठे है नजर उन पर भी कुछ डालो

भारत में आर्य समाजों की कई संस्थाओं द्वारा पारितोषिक समय–समय पर दिये जाते है। भारत नेपाल के परिक्रमावासी स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती ने 1963 से 2013 तक निरन्तर 50 वर्ष साईकिल, मोटर साईकिल, रेल, बस तथा पैदल या जहाँ जो भी साधन मिला, यात्रा की। अब भी 90 वर्ष की उम्र में रेल–बस से यात्रा चल ही रही है। एक किलोमीटर तक 15 किलो वजन उठाकर तथा 5 किलोमीटर पदयात्रा कर लेते हैं। स्वास्थ्य एकदम से ठीक है। अभी तक कभी किसी भी प्रकार से बीमार नहीं हुए। एकदम निर्व्यसनी, चाय–कॉफी नही पीते, अन्य भी कोई व्यसन नही। यात्रा, यात्रा, यात्रा निरन्तर चल रही है। यह यात्रा कहाँ, कब, कैसे समाप्त हो जाये, कहा नहीं जा सकता। सभी सलाह देते है कि यात्रा बन्द करके एक स्थान पर ही रहो, पर कोई यह नहीं कहता कि यहाँ बैठो।

स्वामी जी, भूमिगत स्वतंत्रता सैनानी, इन्द्रा गाँधी के समय भी आपातकाल में भूमिगत रहे, आर्यसमाज के हिन्दी, गौरक्षा सत्याग्रही रहे। अपने गृहस्थ जीवन में संतानो को गुरुकुलों में पढ़ाया। अन्तर्जातीय विवाह भी किये, जो अब तीन पीढ़ी में है।

मनीष कुमार, आर्य समाज
नई सड़क, उज्जैन (म.प्र.)

****

काश समस्त गुरुकुलों को एक सूत्र में पिरोने के प्रयास होते

यह गर्व का विषय है कि श्री मद्दयानन्द कन्या गुरुकुल महाविद्यालय,चोरीपुरा (अमोदा) की छात्राय धनुष विद्या (तीर अन्दाजी) में राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पह. चान बनाये हुऐ हैं। चार वर्ष पूर्व इस सं. स्थान की चार छात्रायें ओलम्पिक खेलों में भी भाग ले चुकी है। परन्तु इनका अनुसरण अन्य गुरुकुल या डी.ए.वी. शिक्षण संस्थान क्यो नहीं कर पा रहे?

जानकर सूत्रों के अनुसार तीर. अंदाजी प्रतियोगिता में ज्यादा संसाधनों की आवश्यकता नहीं होती तथा छात्रायें आसानी से इस परम्परा को अपना सकती हैं। यह खेद है कि राष्ट्रीय स्तर पर गुरुकुल आपस में सामंजस्य नहीं रखते जिस कारण अनेक उपलब्धि का आदान–प्रदान नहीं होता।

यह सर्वविदित है कि मिशनरी शिक्षण संस्थान राष्ट्रीय स्तर पर संगठित होते हैं तथा उनका पाठ्यक्रम भी एक समान होता है

काश देश के समस्त गुरुकुलों एक सूत्र में पिरोने के प्रयास होते और आधुनिकता का परिचायक होते।

कृष्णमोहन गोयल
अमरोहा 244221

****

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 04 का शेष

हुतात्मा महाशय राजपाल...

जाने कब से महाशय राजपाल जी के पीछे पड़ा था, एक तीखे छुरे से उनकी हत्या करने में सफल हुआ है। जिस छोटी–सी पुस्तक को लेकर महाशय राजपाल के विरुद्ध भावनाओं को भड़काया गया था, उसे प्रकाशित हुए तो अब चार वर्ष से अधिक समय बीत चुका है।''

अंतिम यात्रा

महाशय जी का पोस्टमार्टम तो उसी सायंकाल हो गया था परन्तु लाहौर के हिन्दुओं ने यह निर्णय लिया था कि अगले दिन हुतात्मा की शवयात्रा धूम–धाम से निकाली जाए। पुलिस के मुसलमान अधिकारियों ने राज्याधिकारियों के मन में निराधार भय का भूत बिठा दिया कि यदि शवयात्रा निकली तो शहर में दंगा–फसाद हो जाएगा। डिप्टी कमिश्नर ने रातों–रात लाहौर में धारा 144 लगाकर सरकारी अनुमति के बिना जलसे–जुलूसों पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

अगले दिन प्रातः सात बजे ही हस्पताल में श्रद्धालु आने आरम्भ हो गए। आठ बजे तक यह संख्या हज़ारों तक पहुँच गई। डिप्टी कमिश्नर से सम्पर्क करने पर पता चला कि शवयात्रा को रोकना नहीं चाहता था परन्तु नगर में से शवयात्रा को ले जाने के लिए अनुमति देने को तैयार न था। कई प्रतिष्ठित नेता डिप्टी कमिश्नर से मिले परन्तु उसने अनुमति न दी। इन लोगों के लौटने पर एकत्रा भीड़ में रोष व जोश और भी बढ़ गया। भीड़ यह माँग कर रही थी कि शव को नगर के बीच में से ले जाने की अनुमति दी जाए। इसी संघर्ष में चार–पाँच घण्टे निकल गए। लगभग एक बजे डिप्टी कमिश्नर हस्पताल में आए परन्तु उन्होंने अपना आदेश बदलने से इनकार कर दिया। लोगों से कहा गया कि आप तो नगर के बीच में से शव को ले जाना चाहते हैं और डिप्टी कमिश्नर नगर के बाहर से शव–यात्रा को ले जाने की अनुमति देते हैं। जो इसे नहीं मानते वे लोग शान्ति से अपने घरों को चले जावें। सरकार जैसे ठीक समझेगी, शव का समुचित रीति से संस्कार कर देगी।

कुछ लोग घरों को चल दिए परन्तु वह भीड़ जो खाली अर्थी और फूल लेकर हुतात्मा का शव लेने के लिए वहाँ उपस्थित थी, टस से मस न हुई। भीड़ इतनी अधिक थी कि जुलूस ही दिखाई दे रहा था। मेयो हस्तपाल के दूसरे द्वार के सामने डण्डाधारी पुलिस तथा घुड़सवार पुलिस तैनात थी। पुलिस ने आगे आकर लोगों को बढ़ने से रोका। भीड़ में भी स्वाभाविक जोश था। भीड़ ने जयकारे लगाए। अधिकारी चिढ़ गए। अधिकारियों ने लाठी–चार्ज की आज्ञा दे दी। पच्चीस व्यक्ति घायल हो गए। भीड़ फिर भी न हटी, वहीं डटी रही।

अधिकारियों से पुनः बातचीत हुई। पुलिस से कहा गया कि लोगों को इस मार्ग से अपने घरों को जाने दिया जाए। इतने में पुलिस ने फिर लाठी–वर्षा कर दी। बड़ी निर्दयता से हृदयहीन अधिकारियों व सिपाहियों ने लोगों को पीटा। डेढ़ सौ व्यक्ति घायल हो गए। सायंकाल तक लोग भारत बिल्डिंग के प्रागण में खड़े रहे। पुलिस वाले मार्ग रोके खड़े थे। शव हस्पताल में पड़ा रहा।

दूसरे दिन सरकारी अधिकारियों के सन्देश आने लगे। सरकार व आर्यसमाज नेताओं के बीच एक समझौता हुआ। सरकार को झुकना पड़ा और कुछ माँगें आर्यों को छोड़नी पड़ीं। 8 अप्रैल को प्रातः महाशय राजपाल जी के शव को मुख्य बाजारों में से धूमधाम से शमशान–भूमि में ले जाया गया।

शवयात्रा कैसी थी

महाशय जी के बलिदान से आर्य हिन्दू–जाति में ऐसा जोश पैदा हुआ जो देखते ही बनता था। शव–यात्रा के समय यह जोश देखकर सब में उत्साह का संचार हो रहा था।

साढ़े सात–आठ बजे तक अर्थी की सब व्यवस्था हो गई। अनुमान लगाया गया कि पच्चीस हजार लोग शव–यात्रा में सम्मिलित होकर शमशान–भूमि पहुँचे थे। अनारकली का सारा बाज़ार बन्द था। हिन्दुओं ने बड़ी श्रद्धा से अपने मकानों की छतों से हुतात्मा के शव पर पुष्प–वर्षा की।

जनता का यह असाधारण उत्साह प्रमाणित कर रहा था कि हिन्दू अपने हुतात्माओं का कितना सम्मान करते हैं।

बलिदान–स्थली (महाशय जी की दुकान) पर पहुँचने पर युवकों के गगनभेदी जयकारों से लाहौर गूँज उठा। भावुक हृदय श्रद्धालु फूट–फूटकर रोए। शमशान–भूमि पहुँचने में साढ़े तीन घण्टे लग गए।

ठीक पौने बारह बजे हुतात्मा की नश्वर देह को चिता में रखकर महात्मा हंसराज जी ने अग्नि लगाई। महाशय जी के ज्येष्ठ पुत्र प्राणनाथ तब 11 वर्ष के बालक थे। वैदिक विधि के अनुसार वह चिता को अग्नि लगा सकते थे परन्तु सब आर्य नेताओं ने तब यह निर्णय लिया कि समस्त आर्य हिन्दू समाज के प्रतिनिधि के रूप में महात्मा हंसराज चिता को अग्नि लगाएँगे।

जब दाहकर्म हो गया तो अपार जनसमूह (जिसमें देवियाँ भी थीं) शान्त होकर बैठ गया। ईश्वर–प्रार्थना श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने करवाई। प्रार्थना की समाप्ति पर भीड़ में से एकदम एक देवी उठी। उसकी गोदी में डेढ़ वर्ष का एक बालक था। यह देवी हुतात्मा राजपाल जी की धर्मनिष्ठा साध्वी धर्मपत्नी थीं। इसे देवी ने बड़े मार्मिक शब्दों में कहा, ''अपनी बहनों व भाइयों को कहना चाहती हूँ कि मुझे अपने पति के इस प्रकार से मारे जाने का दुख अवश्य है, पर साथ ही उनके धर्म की वेदी पर बलिदान देने का अभिमान भी है। वे मरकर अपना नाम अमर कर गए हैं।''

☞ पृष्ठ 09 का शेष

शिवभक्तों को शिव..

अतः उद्बुद्ध जन सत्य में ही रमण करते हैं।

तात्पर्य हुआ सत्य आचरण से मनुष्य देवता बनता है, अधर्म छूट जाता है। सत्य के आचरण से यश, कीर्ति प्राप्त होती है, समस्त सुख ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। सत्य के आचरण से व्यक्ति सुख से कभी दूर नहीं होता। सत्य सज्जन बनाता है। यास्क कहते हैं– सत्यं कस्मात्? सत्सु तायते, सत्प्रभवं भवतीति वा, नि.3/3/13 अर्थात् सत्य सज्जनों में विद्यमान रहता है, सज्जनों में सत्य विस्तृत, पालित होता है।

महर्षि दयानन्द में सन्देश का आधान

शिवरात्रि के इस सन्देश का आधान गुजरात के टंकारा ग्राम के निवासी **महर्षि दयानन्द** के हृदय में फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी शिवरात्रि को हुआ था। महर्षि ने सत्य शिव की अन्वेषणा की, साथ ही सत्य के ग्रहण के लिए अपने ग्रन्थों में यथावसर बहुत्र निर्देश किए। आर्य समाज के चतुर्थ नियम में उन्होंने लिखा है–

सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

व्यवहारभानु में महर्षि ने सत्य की महत्ता बताते हुए लिखा–

सत्य से चल के धार्मिक लोग जहाँ सत्य की निधि परमात्मा है उसको प्राप्त कर आनन्दित हुए थे और अब भी होते हैं।.......

व्यवहा. पृ. 83।।

जो सब व्यवहारों में झूठ को छोड़कर सत्य ही करते हैं, उनको लाभ ही लाभ होते हैं, हानि कभी नहीं। क्योंकि सत्य व्यवहार करने का नाम धर्म और विपरीत का नाम अधर्म है।

व्यवहा. पृ. 82।।

महर्षि दयानन्द ने शिवरात्रि पर्व पर निराकार घट घट व्यापी सत्यस्वरूप कल्याणकारी शिव ओम् पदवाच्य ब्रह्म का ज्ञान स्वयं प्राप्त किया, एवं सम्पूर्ण विश्व को सत्यस्वरूप ब्रह्म की उपासना का सन्देश दिया। सत्यस्वरूप परब्रह्म की उपलब्धि ही मानव मात्र का कल्याण कर सकती है अतः महर्षि ने सत्य की पहचान का मार्ग प्रशस्त किया। प्रत्येक मनुष्य सत्य करे, सत्य जाने, सत्य माने, यह महर्षि की प्रेरणा है एवं शिवरात्रि का सन्देश है।

सम्पर्क–
आर्य कन्या गुरुकुल शिवगञ्ज,
जि. सिरोही–307027 (राज.)

डॉ. शशिप्रभा कुमार को पितृशोक

डॉ. शशिप्रभा कुमार के पूज्य पिताजी श्री देवराज सचदेव जी का 91वें वर्ष की आयु में 4 अप्रैल, 2014 को हृदय–गति रुक जाने से स्वर्गवास हो गया। श्री हंसराज सचदेव जन्म से ही आर्य समाज के संस्कारों से ओत–प्रोत थे। आपका जन्म लाहौर के पास वारवेल्टन कस्बे में हुआ जहाँ आपके पूज्य पिताजी श्री हीरानंद सचदेव ने अपनी भूमि दान में देकर कस्बे की पहली आर्य समाज की स्थापना कराई। आप दिसम्बर, 2014 से अपनी पुत्री डॉ. शशिप्रभा कुमार के पास भोपाल में थे, वहीं आपका अंतिम संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। 'आर्य जगत' परिवार की ओर से शोक–ग्रस्त परिवार के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए सूचित कर रहे हैं कि उनकी शोक–सभा **12 अप्रैल, 2015 को दोपहर 3.00 से 5.00 बजे तक आर्य समाज मंदिर, सी–606, चेतक वीथी, डिफेंस कालोनी, नई दिल्ली, में होगी।**

–सम्पादक

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 08-09/4/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

महात्मा चैतन्यमुनिजी गुरुकुल आमसेना, ओडिशा द्वारा सम्मानित

आनन्दधाम आश्रम उधमपुर, जम्मू कश्मीर के मुख्य संरक्षक व निदेशक महात्मा चैतन्यमुनि जी को गुरुकुल आमसेना/ओड़िसा में 'विशिष्ठ आर्य सम्मान से सम्मानित किया गया। उन्हें यह सम्मान केन्द्रीय ग्रामीण विकास राज्य मन्त्री श्री सुदर्शन भगतजी के हाथों दिया गया। उल्लेखनीय है कि महात्माजी की अब तक लगभग पचास साहित्यिक एवं आध्यात्मिक पुस्तके प्रकाशित हुई तथा इन्हें अब तक साहित्य अकादमी सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। हिमाचल प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के आर्यवीर संचालक, वेदप्रचार अधिष्ठाता, महामंत्री तथा वरिष्ठ उपाध्यक्ष व कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में इन्होंने अभूतपूर्व सेवा की है जिसके लिए इन्हें सभा की ओर से सम्मानित भी किया गया था। सभा की पत्रिका आर्यवन्दना के सम्पादन से ये बीस वर्षों से जुड़े रहे... पत्रिका आरंभ करने तथा इसे प्रतिष्ठा प्रदान करने में इनका अत्यधिक सहयोग रहा है। वैदिक वशिष्ठ पत्रिका, शब्द, नवनीत भारती तथा गूंजती घाटियाँ आदि

पत्रिकाओं में भी सम्पादन सहयोग प्रदान किया है। महात्मा जी एक प्रतिष्ठित लेखक ही नहीं बल्कि प्रबुद्ध वैदिक प्रवक्ता भी है।

डी.ए.वी. सैक्टर-14 फरीदाबाद में आर्यसमाज का स्थापना दिवस व नववर्ष का सोल्लास स्वागत

डीए.वी. पब्लिक स्कूल, सैक्टर-14 फरीदाबाद के प्रांगण में आर्य समाज का 141वाँ स्थापना दिवस तथा भारतीय नववर्ष विक्रम संवत् 2072 का शुभागमन बहुत ही श्रद्धा तथा धूमधाम से मनाया गया।

इस अवसर पर अपना आध्यात्मिक उद्बोधन देने हेतु प्रवक्ता के रूप में गुरूकुल वृन्दावन के मुख्याधिष्ठाता व संचालक आचार्य स्वदेश जी महाराज पधारे थे। कार्यक्रम के प्रारम्भ मे विद्यालय

के प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया। विद्यालय के संगीत विभाग की शिक्षिकाओं ने नववर्ष के आगमन का स्वागत तथा आर्य समाज का गुणगान संगीत की मधुर लहरियों द्वारा किया। उनके गीतों पर श्रोतागण झूम उठे।

अपने प्रमुख उद्बोधन में आचार्य स्वदेश जी ने कहा कि आर्य समाज कोई धर्म नहीं अपितु एक विचारधारा हैं। संसार में जो भी श्रेष्ठजन हैं वे समाजी हैं। समाज में सुधार हेतु ही आर्य समाज की स्थापना हुई है। समाज में उत्थान हेतु मनुष्यों को झंडे को आगे करके चलना पड़ता है। मानव जीवन अमूल्य है। ईश्वर परोपाकारी है अतः ईश्वर पुत्र मनुष्य को भी परोपकारी होना चाहिए।

अन्त में प्राचार्य जी ने उद्बोधन देने हेतु आचार्य का आभार व्यक्त किया और कहा कि हमारा विद्यालय नैतिक मूल्यों व संस्कारों को बढ़ाने में अपना अमूल्य योगदान निरन्तर देता रहता है। आचार्य जी को शाल द्वारा सम्मान दिया गया। शान्ति पाठ के साथ प्रसाद वितरण हुआ।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, द्वारका में 'जूनियर स्नातक दिवस'

डीए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका में 21 मार्च 201[illegible] 'जूनियर (प्री प्राइमरी) स्नातक दिवस' बड़े हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर श्रीमती चित्रा नाकरा, प्रधानाचार्य, वेदव्यास डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, विकासपुरी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थीं। कार्यक्रम का शुभारम्भ गायत्री मन्त्र से हुआ। तत्पश्चात् 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' के ध्वनि के साथ मुख्य अतिथि एवं विद्यालय की प्रधानाचार्य द्वारा पारम्परिक द्वीप प्रज्ज्वलन किया

गया। माननीया मुख्य अतिथि का स्वागत पौधा अर्पण करके किया गया। इस अवसर पर नन्हें मुन्हें बच्चों द्वारा रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया।

मुख्य अतिथि, चित्रा नाकरा, ने अपने अभिभाषण में अभिभावकों को सम्बोधित करते हुए बच्चों के पालन पोषण के महत्वपूर्ण सुझावों पर प्रकाश डाला क्योंकि अच्छी आदतों का निर्माण बाल्यावस्था में ही होता है। किंडारगार्टेन (बालबिहार) की शिक्षिकाओं ने कठपुतली के माध्यम से भोजन पर एक नाटिका प्रस्तुत की। किंडरगार्टेन की अध्यक्षा (श्रीमती सपना सैनी) ने वार्षिक रोचक गतिविधियों पर प्रकाश डाला। रामवीर पोद्दार तथा प्री प्राइमरी (डव) के छात्र हार्दिक तिवारी ने अपनी किंडरगार्टेन की मस्ती भरी अभिव्यक्ति कविताओं के माध्यम से की। अभिभावकों ने भी अपना अनुभव साझा किया तथा प्रधानाचार्य जी की सृजनात्मक की सराहना करते हुए विद्यालय को धन्यवाद व्यक्त किया।

इस विशेष अवसर पर विद्यालय की प्रधानाचार्य श्रीमती मोनिका मेहन ने सभी अभिभावकों को नववर्ष विक्रम संवत् 2072 की शुभकामनाएँ देते हुए उनका धन्यवाद किया। धन्यवाद ज्ञापन एवं राष्ट्रगान के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

वानप्रस्थ साधन आश्रम रोजड़ में उपनिषद् तथा वेदान्त दर्शन अध्ययन आरम्भ

वानप्रस्थ साधन आश्रम रोजड़ पो. सागपुर, जिला सावरकांठा गुजरात के अधिष्ठाता आचार्य ज्ञानेश्वर आर्य के पत्र के अनुसार वानप्रस्थ साधन आश्रम रोजड़ आर्यवन, रोजड़ में पिछले एक वर्ष से शिक्षा अष्टाध्यायी, व्याकरण आदि वेदांग एवं योगदर्शन, न्यायदर्शन आदि उपांगो का अध्ययन-अध्यापन ऋषि प्रणाली से चल रहे है इसी श्रृखला में ग्यारह उपनिषद् एवं तत्पश्चात सम्पूर्ण वेदान्त दर्शन का अध्ययन ऋषि पद्धति से वेदानुकूल व्याख्या सहित अतिशीघ्र प्रारंभ होने जा रहा है। संस्कृत से अनभिज्ञ विद्यार्थियों को साथ साथ संस्कृत बच्चे पढ़ाने की व्यवस्था होगी। गुरुकुलीय दिनचर्या, पूर्ण अनुशासन, योगाभ्यास व आध्यात्मिक ग्रन्थ अध्ययन में रुचि रखने वाले विद्यार्थी अपना पूर्ण परिचय, नाम, आयु, पता, दूरभाष संख्या, शैक्षणिक योग्यता आदि भेज कर वानप्रस्थ साधन आश्रम रोजड़ पो. सागपुर, जिला सावरकांठा गुजरात-383307 के पते पर पत्र व्यवहार कर सकते हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – पूनम सूरी